मासिक—

मानव मन्दिर

सम्पादक :

डा० परस राम अग्रवाल

वर्ष 10	बृहस्पतिवार 10 नवम्बर, 1983	संख्या 7

मासिक सन्देश

मेरे प्यारे सत्संगियो !

राधास्वामी, परम दयाल जी सहाई !

मेरा यह सन्देश आपको नवम्बर १९८३ के मानव मन्दिर में मिलेगा। इसी पवित्र महीने में ही १८८६ में, मालिके कुल परम तत्त्वाधार, परम सन्त परम दयाल पण्डित फ़कीर चन्द जी महाराज, इस पृथ्वी पर अवतरित हुए थे। अतः इस महीने के 'मानव मन्दिर' में केवल परम दयाल जी के जीवन चरित्र का लेख ही दिया जा रहा है, जो कि 'सिद्ध सत्पुरुष फ़कीर बाबा-चमत्कारों से परे' पुस्तक से छांटा गया है, जिसमें जगह-२ पर परम दयाल जी के विचार उन्हीं के शब्दों में ही दिये गये हैं। यह पुस्तक भारत के विख्यात प्रकाशक आत्मा राम एण्ड सन्ज़ देहली के द्वारा छपी है। इसका पहला संस्करण समाप्त हो चुका है और दूसरा छप चुका है। इस पुस्तक को जिस-२ ने

भी पढ़ा है उसे अपने आध्यात्मिक जीवन में बहुत ही लाभ पहुँचा है। परम दयाल जो के पुराने सत्संगियों का कहना है कि इस पुस्तक को पढ़ने के बाद ही उन्हें पूरी तरह से समझ आया है कि परम दयाल जी महाराज ने जीवों के कल्याण के लिये किस सच्चाई को ब्यान किया है। नये पाठकों ने भी इस पुस्तक को पढ़ कर कहा है कि उहोंने अपने जीवन में ऐसी आँख खोल देने वाली पुस्तक नहीं पढ़ी।

इस पुस्तक में मानवता धर्म की व्याख्या बहुत सरल तरीके से की गई है और सभी धर्मों में छुपी हुई सच्चाई की ओर इशारा किया गया है। परम दयाल जी महाराज ने यह भविष्यवाणी की थी कि मानवमात्र के कल्याण के लिये यह सत्यता का धर्म सारे संसार में फैलेगा। इसलिये ही परम दयाल जी ने गुरु ऋण चुकाने के लिये मुझे, इस परमार्थ का काम सौंपा है। पिछले दो वर्षों से मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि परम दयाल जी की भविष्यवाणी सच्ची साबित हो रही है।

मैं २३ सितम्बर से २६ सितम्बर तक परम दयाल जी के अति प्रिय शिष्य श्री विजय नरेश नेगी एस० एस० पी० हिसार के निमन्त्रण पर पहली बार

हिसार की जनता को सत्संग देने के लिये गया। श्री नेगी ने तीन दिनों में बहुत ही सुचारु रूप से हिसार नगर की अनेक संस्थाओं में मेरे नौ सत्संग आयोजित किये। इन सत्संगों में अलग-२ स्थानों पर सुनने वालों की संख्या २००० से लेकर ५००० तक भी थी। सभी सत्संगों में सुनने वालों ने बहुत ही रुचि दिखाई और महसूस किया कि सत्यता और मानवता का धर्म ही आज का धर्म है और इसी के द्वारा ही सभी धर्मों वाले, अपने-२ रास्ते पर सच्चाई से चलते हुए नफ़रत को छोड़कर, एक दूसरे से प्रेम से रह सकते हैं। हिसार के सभी स्तरों के लोग, आम जनता, सरकारी कर्मचारी, वकील, डाक्टर, प्रोफ़ेसर, उद्योग-पति, व्यापारी, पुलिस कर्मचारी और राजनीतिज्ञ क़रीब-२ सभी सत्संगों में मौजूद थे।

इन सत्संगों में एक जैन सम्प्रदाय ने और एक हिसार की सिंह सभा ने श्री गुरुद्वारे में आयोजित किये। सभी स्थानों पर सभी श्रोताओं ने यह महसूस किया कि ऐसे सत्संगों का क्रम हिसार नगर में हमेशा चलना चाहिये। इस अवसर पर मुझे यह जान कर बहुत प्रसन्नता हुई कि श्री विजय नरेश नेगी परम दयाल जी की कृपा से एक योगयुक्त पुलिस अफ़सर

होते हुए भी न ही केवल ज्ञानी और अच्छे वक्ता हैं किन्तु उनके अन्तस् में फ़कीराना और वैराग्य की भावना है।

२७ और २८ सितम्बर को चण्डीगढ़ के निकट जयन्ती और मुल्लापुर में तीन सत्संग हुए। इन दोनों स्थानों पर सत्संगियों को सच्ची भक्ति, सरलता, प्रेम और विश्वास की जीती-जागती तसवीर देखने में आई। जयन्ती गाँव में मेरे अति प्यारे सच्चे सत्संगी श्री गुरु-चरण दास पुरी ने बहुत ही सुन्दर प्रबन्ध किया। उसके सच्चे प्रेम के बहाव से सारे गाँव को लाभ पहुँचा। गुरुचरण दास ने अपने जज़्बे में अपनी छोटी सी दुकान के गल्ले में से सारा पैसा उठा कर मानवता मन्दिर के लिए भेंट कर दिया। मुझे यह बात बाद में मालूम हुई। दूसरे दिन मैंने उसे मुल्लापुर में डांट कर कहा कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए।

मुल्लापुर में मेरे परम प्रिय नरेश कुमार ने सच्चाई, भक्ति और लगन की बेनज़ीर मिसाल कायम की। उसने अपने मित्रों की सहायता से मुल्लापुर की एक धर्मशाला में विशाल सत्संगों का आयोजन किया, जिसमें कुछ सत्संगी जयन्ती और चण्डीगढ़ से शामिल हुए और सभी सत्संगियों को भोजन भी

खिलाया गया। प्रिय नरेश ने सत्संग के अन्त में अपने दिल के सच्चे उद्गार ज़ाहिर करते हुए आँसुओं के साथ आभार प्रकट किया और बताया कि इन दो सत्संगों से मुल्लापुर निवासियों को नया जीवन मिल गया है। प्यारे नरेश की सच्ची भक्ति के जज़्बे में उसके शब्दों को सुनकर बहुत से सत्संगी आँसू बहा रहे थे, जिनमें से श्री त्रिलोक चन्द की पत्नी चन्द्रा जी और डा० के. एल. जौड़ा की पत्नी आज्ञावन्ती जी तथा भाग्य शर्मा जी के नाम उल्लेखनीय हैं।

इस सन्देश में यह सब कुछ लिखने का मतलब यह है कि सत्संग के प्रभाव से मनुष्य में भक्ति, वैराग्य और त्याग की भावनाएँ ज़रूर पैदा होती हैं। जब तक त्याग या कुर्बानी का जज्बा पैदा नहीं हो, तब तक सच्चा ज्ञान हो ही नहीं सकता, और सच्चा ज्ञान ही मनुष्य को उस हालत में पहुँचा देता है, जिसे जीवन्मुक्ति या राधास्वामी हालत कहा जाता है। सभी धर्मों में त्याग की भावना को पैदा करने के लिए ही यज्ञ को एक अच्छा साधन माना गया है। इसी दृष्टि से ही मैं अपने पिछले मासिक सन्देश में दिये गये वचन को निभाते हुए यज्ञ शब्द की सन्तमत की दृष्टि से व्याख्या करूंगा।

आम लोग यही समझते हैं कि यज्ञ का मतलब आग में आहुति देना ही है। उनका यह भी मत है कि वेदों में भी यज्ञ शब्द का मतलब यही था। इसका नतीजा यह हुआ कि वेदमत के कई फ़िरकों में पशु बलि देने का रिवाज हो गया, जो आज तक भी कहीं-२ दिखाई देने में आता है। परन्तु यह विचार एकदम ग़लत हैं। जिन्होंने वेदों, ब्राह्मणों तथा उपनिषदों को नहीं पढ़ा है वे ही इस भ्रम में हैं। जो लोग यज्ञ और हवन को एक रीति-रिवाज के रूप में मान कर घर में रोज़ाना अग्नि को प्रज्वलित करके आहुति देते हैं, वे भी यज्ञ के सही मतलब को नहीं जानते। अज्ञान के कारण ही यज्ञ का मतलब बलि देना ही समझा गया है। इसलिए वेदमत के जिन-२ फ़िरकों ने यज्ञ का मतलब केवल आहुति देने की रसम ही समझ रखा है, वे वेदमत न होकर मनमत हैं।

वेद नाम ज्ञान का है, ऋक्, साम, यजुर् और अथर्व चारों वेदों में दो तरह की विद्याओं या ज्ञान की धाराओं का उल्लेख किया गया है। ये दो विद्याएँ मन्त्र-विद्या और यज्ञ-विद्या कहलाती हैं। मन्त्र शब्द का मतलब उस एक मूल आधार का रहस्य है, जिससे

यह अनेक रूपों वाला जगत् निकला है। यज्ञ शब्द का मतलब वह सारा जगत् है, जिसमें कोटि-२ ब्रह्माण्ड, आकाश गंगाएँ, सौरमण्डल और पृथ्वी आदि मौजूद हैं। दूसरे शब्दों में, जगत् का फैलाव यज्ञ है और उस फैलाव का आधार या ब्रह्म तत्त्व मन्त्र है। इसी विकास या फैलाव में ही वे सभी शक्तियाँ शामिल हैं, जिन्हें देवी-देवता कहा जाता है। सारा ब्रह्माण्डी जगत् उसी परम तत्त्व का यज्ञ है, जो अपने आप में एक और अनेक दोनों से परे है।

उस अनन्त परम तत्त्व ने अपने आप को यज्ञ के द्वारा हद या सीमा में कर दिया है। दूसरे शब्दों में, दयाल ने अपने आप को काल (time) में बदल दिया है। इस लिहाज़ से, यज्ञ का मतलब त्याग या कुर्बानी है। आहूति देने का मतलब अपनी ही किसी वस्तु का त्याग करना है। इस त्याग से मनुष्य धीरे-२ काल की हद को छोड़ कर, अपने में ही उस परम तत्त्व का अनुभव करता है, जो सर्वाधार है। यज्ञ करना केवल एक प्रतीक या नमूना है, जो हमें यह याद दिलाता है कि यह सारा जगत् सिन्धु की एक बूँद मात्र है। मनुष्य में शरीर, मन, बुद्धि और अहंकार यज्ञ की तरफ़ इशारा करते हैं, जबकि विशुद्ध आत्मा या सुरत

परम तत्त्व की ओर इशारा करती है। जब तक मनुष्य शरीर, मन, बुद्धि तथा अहंकार का यज्ञ या त्याग नहीं करता तब तक उसे अपने असली रूप का ज्ञान नहीं हो सकता। यज्ञ की यह व्याख्या सत सनातन धर्म के अनुसार ही है और यही व्याख्या सन्त मत के अनुसार भी है। अगले मासिक सन्देश में यज्ञ की व्याख्या विस्तार पूर्वक की जायेगी।

इन शब्दों के साथ मैं आपको सद्भावना भेज रहा हूँ। मैं यह चाहता हूँ कि आप इस महीने के मानव मन्दिर को पढ़ कर जीवन में उतारें ताकि आपका लोक और परलोक दोनों सुधर जायँ।

सब को सप्रेम राधास्वामी !

आपका फ़कीरमय
मानव

परम सन्त परम दयाल

फ़कीर बाबा की संक्षिप्त जीवनी

ईश्वर अनन्त है, उसका पारावार आज तक किसी ने नहीं पाया, इसलिए उस अनन्त ईश्वर का ज्ञान भी अनन्त है, जिसका पारावार नहीं। जो लोग यह दावा करते हैं कि उन्हें और केवल उन्हें ही ईश्वर का सच्चा या पूरा ज्ञान है, वह सही नहीं हो सकते। कोई भी सच्चा साधु या महात्मा इस बात का दावा नहीं करता कि उसका ईश्वर के प्रति ज्ञान पूर्ण है। फ़कीर बाबा अपने हर एक सत्संग में सदा इस बात पर ज़ोर देकर कहते हैं कि उनका ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान अन्तिम नहीं है।

फ़कीर बाबा का जन्म एक सत् पुरुष के रूप में हमारे समय की ज़रूरत के मुताबिक ही हुआ है। फ़कीर बाबा अपने इस पृथ्वी पर आने का कारण और उद्देश्य जानते हैं। वह कई बार कहते हैं, "मैं सत्य

का अवतार हूँ।" ये शब्द उनके अन्तस् से निकले। अपने जीवन का ब्योरा देते हुए फ़कीर बाबा कहते हैं, "मैं पंझल गाँव में एक छोटे-से घर में एक ब्राह्मण वंश में १८ नवम्बर, १८८६ में पैदा हुआ। यह तो बात है इस भौतिक जन्म की, असल में तो मैं अविनाशी हूँ, न कभी जन्मता हूँ न मरता हूँ।"

फ़कीरचन्द के पिता का नाम पण्डित मस्तराम था, जो भारतीय रेलवे पुलिस में एक सिपाही थे। यह बात ध्यान देने योग्य है कि इस खास बच्चे का नाम भी खास चुना गया। पण्डित मस्तराम जी के विवाह को हुए कई साल हो गए थे, किन्तु उनके कोई सन्तान नहीं हुई। कई सालों तक साधु-सन्तों के आशीर्वाद से जब इस बालक का जन्म हुआ, तो उसका नाम फ़कीर चन्द यानी कि साधु की रौशनी या प्रकाश रखा गया। फ़कीर उर्दू का शब्द है, जिसे हिन्दी में साधु या सन्यासी कहते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उसका नामकरण अचानक नहीं किया गया। आम तौर पर माता-पिता अपनी सन्तान को ऐसे नाम देते हैं, जिनका सम्बन्ध धन, सम्पत्ति, शक्ति या यश से होता है, किन्तु फ़कीर का मतलब तो वह व्यक्ति है, जिसके पास कोई सम्पत्ति

या धन न हो। फ़कीर वह है, जिसने सब संसार की चीज़ों का त्याग कर दिया हो।

इसी नाम के कारण ही फ़कीर बाबा के पूज्य गुरु दाता दयाल श्री शिवब्रत लाल वर्मन जी महाराज ने ज्ञान से भरपूर अनेकों ऐसी कविताएँ फ़कीर पर लिखीं, जिनमें उन्हें सच्चा फ़कीर बनने की शिक्षा दी। इन कविताओं का संकलन 'फ़कीर भजनावली' नामक एक पुस्तक में है, जो पढ़ने योग्य है।

इस नाम के प्रभाव से बालक फ़कीरचन्द में शुरू से ही आध्यात्मिक प्रवृत्ति मौजूद थी। सात साल की आयु में ही वह ईश्वर की खोज में लग गए। ब्राह्मण वंश में पैदा होने के कारण और अपने माता-पिता को ईश्वर की पूजा करते हुए देखकर कोई भी बालक ईश्वर-भक्ति की ओर लग सकता है। फ़कीरचन्द के पिता जन्म से ब्राह्मण ज़रूर थे, परन्तु धन्धे से वह पुरोहित नहीं थे, बल्कि एक सिपाही थे। कुछ तो घर की माली हालत अच्छी न होने के कारण और कुछ सिपाही का धन्धा होने के कारण, उनका स्वभाव कुछ कठोर था। वह अपने परिवार के साथ सख्ती का व्यवहार करते थे। बालक फ़कीरचन्द अपने पिता

की सख्ती से राहत पाने के लिए, उस ईश्वर की भक्ति की ओर लग गए, जो विश्व के कर्त्ता हैं और दयालु हैं। फ़कीरचन्द की माता बहुत ही धार्मिक थीं। वह हर रोज़ अपने परिवार के ठाकुरों की पूजा करती थीं।

बालक फ़कीर रोज़ अपनी माता को ठाकुरों की पूजा करते हुए देखते थे, किन्तु उनकी अपनी पूजा केवल कर्मकाण्ड तक ही सीमित नहीं थी। उन्होंने बचपन से ही नैतिक जीवन को अपनाया और धार्मिक ग्रन्थों—रामायण और महाभारत को लगातार पढ़ा। इन ग्रन्थों में वह ईश्वर के अवतार भगवान राम और भगवान कृष्ण से प्रभावित हुए और बचपन से ही उन्हीं के पवित्र रूप पर ध्यान लगाने लगे।

छोटी-सी उमर में भी वह ईश्वर की पूजा मानसिक रूप से करते थे, शारीरिक रूप से नहीं। जब कभी उनकी माता को ठाकुरों की पूजा नहीं करनी होती थी, तो वह इस काम को बालक फ़कीर पर छोड़ देती थीं। फ़कीर ठाकुरों की पूजा मन से करके माता को कह देते कि उन्होंने ठाकुरों की पूजा कर दी है, उन्हें नहला दिया है और उनको तिलक भी लगा दिया है। लेकिन माता ठाकुरों के ऊपर

जमी हुई धूल को देखकर फ़कीर से शिकायत करतीं और कहतीं कि वह झूठ बोल रहें हैं। उन्होंने न तो ठाकुरों को नहलाया है और न ही उनकी पूजा की है। लेकिन फ़कीर सदा यही कहते कि उन्होंने ठाकुरों की पूजा मानसिक रूप से कर ली है।

किशोर फ़कीरचन्द का भगवान राम और कृष्ण के प्रति प्रेम, उनकी आराधना तथा ध्यान इतना सच्चा था कि उन्होंने इन दोनों अवतारों के साक्षात् दर्शन किए। उनके साथ बातचीत को और इस भक्ति के दौरान में कई चमत्कारी घटनाओं का अनुभव किया। इतना कुछ अनुभव करने के बाद भी फ़कीर के मन में हमेशा उस परम तत्त्व, उस ईश्वर के साक्षात् दर्शन करने की लालसा बनी रही जो परम आधार है। हिन्दू धर्म के साहित्य और दर्शन का उन्होंने गहरा अध्ययन इसलिए नहीं किया, क्योंकि उन्हें संस्कृत का पूरा ज्ञान नहीं था। इसी कारण वह वेदों, उपनिषदों, भगवद्गीता इत्यादि का भी ठीक तरह से अध्ययन नहीं कर पाए किन्तु उनकी यह कमी उनकी आध्यात्मिक तरक्की में रुकावट नहीं बनी।

सच्चे ईश्वर के स्वरूप के सम्बन्ध में, उन्हें जो

अपना अनुभव हुआ, वह ऊपर दिए गए ग्रन्थों के दार्शनिक विचारों को पुष्ट करता है। यदि फ़कीर बाबा ने इन ग्रन्थों को पढ़ा होता तो यह कहा जा सकता था कि उनके विचार उन ग्रन्थों को पढ़ने के कारण ही बने हैं। किन्तु जब उन्हें परम सत्य के सम्बन्ध में उनका ज्ञान या अनुभव बग़ैर ग्रन्थों के पढ़े हुआ, तो इससे यह सिद्ध होता है कि फ़कीर बाबा का अन्दर का अनुभव उतना ही सच्चा है जितना कि ग्रन्थों में लिखा हुआ सत्य है।

फ़कीर बाबा को शिक्षा आठवीं कक्षा तक ही रही। उन्होंने यह शिक्षा पंजाब के ज़िला ज़ेहलम में स्थित पिण्ड दादन खान (जो अब पाकिस्तान में है) में पाई, क्योंकि उनके पिता उस समय महकमा रेल की पुलिस में वहाँ काम करते थे। अपनी माली हालत अच्छी न होने के कारण वह अपने बेटे फ़कीर को ऊँची शिक्षा नहीं दिला सके। फ़कीरचन्द ने १५ वर्ष की आयु में भारतीय रेलवे के कन्स्ट्रक्शन विभाग में सिगनेलर के पद पर काम करना शुरू कर दिया। वह उस किशोरावस्था में भी काफ़ी मेहनती थे। अपने खाली समय में, वह पास वाले रेलवे स्टेशन पर जाकर, वहाँ के तार बाबू की देख-रेख में, तार भेजने

की कला का अभ्यास करने लगे। इस ट्रेनिंग की वजह से उन्हें जल्दी ही भारतीय रेलवे विभाग में सहायक स्टेशन मास्टर लगा दिया गया और अपनी सच्चाई, ईमानदारी और मेहनत के कारण वह जल्दी ही स्टेशन मास्टर के पद पर पहुँच गए।

फ़कीर बाबा हमेशा इस बात पर ज़ोर देते हैं कि आत्मा की तरक्की के लिए मेहनत और सच्चाई का जीवन बिताना बहुत ज़रूरी है। माता-पिता के प्रति, पति-पत्नी के प्रति, सन्तान के प्रति, समाज के प्रति, देश और विश्व के प्रति सभी को अपना फ़र्ज़ सच्चाई और दिल से निभाना चाहिए। जो सन्त, महात्मा या गुरु अपनी अन्दर की सिद्धियों को धन इकट्ठा करने, नाम या यश कमाने या शोहरत पाने के लिए साधन बना लेता है, उसकी आत्मिक तरक्की नहीं हो सकती वह कभी पूर्णता को प्राप्त हो ही नहीं सकता। फ़कीर बाबा ने आध्यात्मिक जीवन में पूरी सफलता प्राप्त की। उन्होंने अपनी अपार दया से लाखों दुःखी जीवों को शारीरिक, मानसिक और आत्मिक लाभ पहुँचाया। हज़ारों मनुष्यों ने उनके रूप के दर्शन करके अपने को मुसीबतों से बचाया और अपनी इच्छाओं को पूरा किया। लेकिन फ़कीर

बाबा ने कभी अपने सन्त या गुरु होने को धन कमाने का साधन नहीं बनाया और न ही उन्हें नाम और यश कमाने की इच्छा थी। उन्होंने अपनी सारी ज़िन्दगी सच्चाई और अनुशासन में बिताई और हमेशा अपनी मेहनत द्वारा कमाए गए धन से अपना और अपने परिवार का पेट पाला।

भारतीय रेलवे विभाग से रिटायर होने के बाद भी उन्होंने काफ़ी समय तक मिलिट्री में एक क्लर्क का काम किया, और वहाँ से भी रिटायर होने के बाद, घर की माली हालत को सुधारने के लिए एक सेठ की चक्की पर मुन्शी का काम करते रहे। यदि वह चाहते तो उनके एक नहीं, बल्कि अनेक लखपति अनुयायी उन पर धन और भौतिक सुखों की वर्षा कर देते। किन्तु फ़कीर बाबा के अपने असूल थे, वह कभी किसी से अपने लिए एक पाई भी नहीं लेते। उनके पास जो भी भेंट आई, सब मानवता मन्दिर और फ़कीर लायब्रेरी चेरीटेबल ट्रस्ट के नाम से आई। उस धन में से एक पाई भी कभी उन्होंने अपने या अपने परिवार के ख़र्चे पर ख़र्च नहीं की। उनकी 95 साल की आयू में हमें जो चरित्र की महानता और ऊँचे विचार उनके जीवन में दिखाई देते, ये सब

उनकी जवानी में भी मौजूद थे। जब वह रेलवे की नौकरी करते थे, घर की माली हालत अच्छी न होने के बावजूद भी और बड़े-बड़े प्रलोभनों के होते हुए भी उन्होने कभी किसी से एक पैसे की भी रिश्वत नहीं ली · रेलवे की जायदाद या पैसे को कभी अपने खुद के काम के लिए प्रयोग नहीं किया और न ही अपने पद या अधिकार का कभी नाजायज़ फ़ायदा उठाया।

उनके जीवन की एक दिलचस्प घटना का यहाँ उल्लेख करना ठीक रहेगा यह घटना उस समय की है जब वह पहले महायुद्ध में ईराक में बर्तानवी फौज के तार विभाग में काम कर रहे थे। काम करते समय उनसे जो ग़ल्तियाँ होतीं, वे उन्हें सरकारी रजिस्टर में लिख देते। एक दिन जब अंग्रेज़ अफ़सर उनके काम को देखने आया, तो वह उस रजिस्टर को देखकर हैरान रह गया। मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह अपनी ग़ल्तियों को हमेशा छुपाने की कोशिश करता है, लेकिन फ़कीर चन्द जी ने तो अपनी ग़ल्तियों को सरकारी रजिस्टर में दर्ज कर रखा था। उस अंग्रेज़ अफ़सर ने फ़कीर चन्द जी की सच्चाई से प्रभावित होकर कहा, "फ़कीरचन्द तुम अपनी ग़ल्तियों को

खुद ही सरकारी रजिस्टर में दर्ज क्यों करते हो ?" फ़कीर जी ने जवाब दिया, "क्योंकि मैं ग़ल्तियाँ करता हूँ। मैं यह जानना चाहता हूँ कि इतनी कोशिश करने के बाद भी कि मैं ग़ल्ती नहीं करूँ, मैं ग़ल्ती क्यों करता हूँ। क्या आप मुझे बता सकते हैं कि मनुष्य ग़ल्ती क्यों करता है ?" वह अंग्रेज़ अफ़सर इस सवाल का जवाब नहीं दे सका। किन्तु वहाँ से जाने के बाद उसने एक-दो दिन के बाद फ़कीर जी को एक तार भेजा जिसमें लिखा था कि फ़कीर चन्द जी को तरक्की दी गई है। बाद में उस अफ़सर ने नवयुवक फ़कीर जो से टेली-फोन पर बात करते हुए कहा, "क्या तुम जानते हो फ़कीरचन्द, कि तुम्हें तरक्की क्यों दी गई है ?" फ़कीर इसका कोई उत्तर नहीं दे सके। बात को जारी रखते हुए उस अफ़सर ने कहा, "क्योंकि तुम भूल करते हो।" फ़कीर बाबा के इस प्रश्न का कि मनुष्य भूल क्यों करता है, उन्हें अत्यन्त सफल उत्तर मिला।

पण्डित फ़कीरचन्द जी की शादी तेरह साल की आयु में ही हो गई थी। किन्तु उनकी पत्नी का कुछ ही सालों बाद देहान्त हो गया। बाद में जब उनकी दूसरी शादी हुई उस समय भी उनकी आयु बहुत नहीं थी।

वह अपनी जवानी की भूलों को कभी छुपाते नहीं थे, हालाँकि वे भूलें मामूली-सी ही थीं। जवानी की भूलों के सम्बन्ध में फ़कीर बाबा के इन शब्दों को यहाँ रखना उचित होगा। वह लिखते हैं :

"मेरी कच्ची उमर में मेरा वास्ता रेलवे के अफ़सरों, प्लेटियरों और विभाग के ठेकेदारों से पड़ा। वे सभी मांसाहारी थे। उनकी संगत का असर मुझ पर भी पड़ा। मैं भी मांस खाने लगा। मैंने छः मास तक मांस खाया, तीन बार रम पीया, एक बार जुआ खेला और एक बार एक वेश्या के पास भी गया।

१९०५ में एक बहुत ठण्डा जाड़े का दिन था। पिछली रात को कांगड़ा के जिले में एक भारी भूकम्प आया था और हज़ारों आदमी मारे गये थे। मेरा चचेरा भाई, जो उन दिनों मेरे पास आया हुआ था, सुबह उठा। वह ठण्डे पानी से नहाया, फिर पूजा-पाठ किया और उसके बाद उसने हम दोनों के लिए खाना बनाया। हम दोनों खाना खाने बैठे ही थे कि रेलवे स्टेशन से एक खलासी पके मांस की एक तश्तरी लेकर आया और उसे हमारे सामने रख दिया। मेरे चचेरे भाई ने अपनी ज़िन्दगी में कभी मांस नहीं खाया था, उसे मांस की गन्ध बहुत

बुरी लगी। उसने नफ़रत से अपना मुँह और नाक बन्द कर लिया और दूर से मेरी थाली में दो रोटियाँ फेंक दीं। इस घटना से मेरे दिल में एक अजीब-सी उथल-पुथल हुई। मैं अपने आप से सवाल-जवाब करने लगा, देखो एक ओर तो यह मेरा भाई है जो हिन्दू धर्म के मुताबिक शुद्ध जीवन बिता रहा है, दूसरी ओर मैं हूँ, जो इतना गिर गया हूँ। ऐसा क्यों है। मैंने अपने आप को खूब धिक्कारा और मेरे मन में काफ़ी समय तक संघर्ष चलता रहा कि मैं उस मांस को खाऊँ या नहीं। एक ब्राह्मण के लिए माँस खाना पाप है और मैं एक ब्राह्मण हूँ। अन्त में मैं इस फ़ैसले पर पहुंचा कि मैं मांस नहीं खाऊंगा। मैंने वह मांस की तश्तरी बाहर फेंक दी और कभी भी मांस न खाने का फ़ैसला किया।

छः महीने तक मैं पश्चात्ताप करता रहा कि मैंने ब्राह्मण होकर मांस खाया। किन्तु एक दिन सुबह जब मैं बाहर घूमने जा रहा था, तो मेरे साथ गाँव का चौधरी हो लिया। रास्ते में हम दोनों मांस खाने के लाभ और हानियों पर बहस करने लगे। चौधरी ने मांस खाने के हक में इतनी अच्छी दलीलें दीं कि मैं अपने मांस न खाने के फ़ैसले को भूल गया।

चौधरी ने मुझ से अलग होने से पहले मुझे एक मुर्गा भेंट किया। मैंने चपरासी को उसे काट कर साफ़ करने को कहा। वह मुर्गे को काटकर मेरे पास लाया।

इन छः महीनों के दौरान में, जब मैंने मांस न खाने का फ़ैसला किया था, मैं अकेला ही रह रहा था, मेरी पत्नी मेरे पास नहीं थी। मैं अपने काम की प्यास बुझाने के लिए एक रात को एक वेश्या के पास गया किन्तु इसके बाद मैंने बहुत पश्चात्ताप किया और पिता जी को एक पत्र लिखा कि वह माता जी के साथ मेरी पत्नी को फ़ौरन भेज दें। माता जी मेरी पत्नी को साथ लेकर मेरे पास आ गईं और हमारे पास रहने लगीं। जब मैं एक दिन कटे हुए मुर्गे को घर ले आया, तो अपनी पत्नी को उसे पकाने को कहा, तो उसे यह अच्छा नहीं लगा, उसने मांस को कभी छुआ तक नहीं था, फिर भी मैंने उसे उस मुर्गे को पकाने के लिए कहा। जब मेरी माताजी को इस बात का पता चला तो वह फ़ौरन रसोई में घुस गईं और अन्दर जाकर रसोई का दरवाज़ा बन्द कर दिया। मेरी पत्नी ने दरवाज़ा खुलवाने के लिए बार-बार उसे खटखटाया। किन्तु मेरी माता जी ने दरवाज़ा नहीं खोला। मैं और मेरा भाई भी वहाँ पहुच गए।

हम सब ने मिल कर दरवाज़े को खटखटाया और माता जी से उसे खोलने की प्रार्थना की। किन्तु माता जी ने दरवाज़ा नहीं खोला। थोड़ी देर बाद जब हमने रसोई से धुआँ निकलते देखा, तो हम सब घबड़ा गए। मैं भाग कर एक कुल्हाड़ा ले आया और कुल्हाड़े से दरवाज़े को तोड़ डाला। रसोई के धुएँ से माता जी का दम घुट रहा था। मैंने उन्हें खींच कर बाहर आँगन में निकाला। माँ के प्यार से भरपूर होकर मैंने उनका आलिंगन करते हुए कहा, 'मां! आपने दरवाज़ा क्यों नहीं खोला, यदि धुएँ की घुटन में आपका दम निकल जाता, तो मैं अपनी प्यारी माँ को कहाँ से लाता?' माताजी ने गुस्से में आकर मुझे ऐसे ज़ोर से धक्का दिया कि मैं नीचे गिर गया। मैंने बुरा नहीं माना और खड़ा होकर माता जी का आलिंगन करने के लिए फिर आगे बढ़ा और बोला, 'माँ तुम मुझसे नाराज़ क्यों हो?' इस पर माता जी ने जवाब दिया 'फ़कीर, तुमने एक माँ के बच्चे की हत्या की है। इस बच्चे की माँ मुर्गी विलाप कर रही होगी।' ममतामयी माँ के ये बचन सुनकर मैं अपने आपको धिक्कार ने लगा और मैंने फौरन फ़ैसला किया कि अब

मैं कभी भी मांस नहीं खाऊंगा। उस समय से लेकर आज तक मैंने न तो कभी मांस खाया है, न शराब पी है, न जुआ खेला है और न ही कभी वेश्या के पास गया हूँ। जवानी में मेरी कामवृत्ति प्रबल थी, लेकिन उसको पूरा करने के लिए मेरी धर्म-पत्नी मेरे पास थीं।"

फ़कीर बाबा की जवानी में भी यह प्रबल इच्छा रही कि वह पाक जीवन को अपना कर ईश्वर के साक्षात् दर्शन करें और अपने किए गए पापों के लिए क्षमा माँगें। फ़कीर बाबा के शब्दों में, "मैंने अपने पहले किए गए पापों या भूलों के प्रायश्चित्त के लिए भगवान राम और कृष्ण से लगातार प्रार्थना की। मैं प्रार्थना करता जाता और रोता जाता था। मैं ऐसा इसलिए करता था, क्योंकि मैं चाहता था कि मेरा मन शुद्ध हो जाय।

हालाँकि मैं लगातार कई दिन तक प्रार्थना करता रहा, फिर भी मेरी वे चार भूलें मुझे दुःख देती रहीं। मैं कई बार अशान्त हो जाता। एक चाँदनी रात की घटना है। आधी रात का समय था। मैं ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था और बुरी तरह से रो रहा था। क्या देखता हूँ कि एक सफ़ेद दाढ़ी वाला बूढ़ा साधु

अपने हाथ में तम्बूरा लिए मेरे सामने खड़ा है। उसने बहुत प्यार से मुझे कहा, 'प्यारे बालक! तुम्हारे ईश्वर ने तुम्हारे लिए इस पृथ्वी पर मनुष्य का रूप धारण किया है। तुम जल्दी ही उनसे मिलोगे और तुम्हें क्षमा मिल जायेगी।' ये शब्द कहने के बाद वह साधु अदृश्य हो गया। इस घटना के बाद भगवान के साक्षात् दर्शन करने की मेरी बेचैनी और भी बढ़ गई।

इसी दौरान में मुझे रेलवे के महकमे में बागांवाले रेलवे स्टेशन पर नायब स्टेशन मास्टर की पक्की नौकरी मिल गई थी। भगवान के साक्षात् दर्शन करने की मेरी लालसा रोज़ बढ़ती चली गई। एक दिन तो मैं भगवान के दर्शन करने के लिये चौबीस घण्टे तक रोता रहा—न कुछ खाया न पिया। मुझे बीमार समझ कर डाक्टरों को बुलाया गया, मुझे दवाइयाँ दी गईं, किन्तु कुछ फ़ायदा नहीं हुआ। मैं रोता ही रहा। दूसरे दिन सुबह पाँच बजे के करीब मुझे शिव-ब्रत लाल जी महाराज के दर्शन हुए। उन्होंने पास वाले एक कुएँ से पानी निकाल कर मुझे नहलाया और उसके बाद मुझे अपना लाहौर का पता बताया। "इसी बीच मेरे पिता जी वहाँ आ गये और उन्होंने

महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज से मेरी शिकायतें कीं। इतनी देर में रेलवे स्टेशन का एक चपरासी मेरे घर आ गया और उसने मुझे जगा दिया और मेरा स्वप्न भंग हो गया। इस स्वप्न या अनुभव से मुझे पूरा यकीन हो गया कि भगवान ने महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज के रूप में इस पृथ्वी पर अवतार लिया है।"

इस घटना से प्रेरित होकर फ़कीर बाबा महर्षि शिवब्रत लाल जी को दस महीने तक लगातार लाहौर के पते पर पत्र लिखते रहे। वह हर हफ़्ते एक पत्र लिखते थे। किन्तु उन्हें एक भी पत्र का जवाब नहीं आया। अन्त में जिस तरह वह महर्षि जी के सम्पर्क में आए उसका वर्णन मैं उन्हीं के शब्दों में करना चाहूँगा जो इस प्रकार है :

"मैंने शिवब्रत लाल जी महाराज को उनके स्वप्न में बताए गये पते पर हर हफ़्ते एक पत्र लिखना शुरू कर दिया। उन पत्रों में मैं सदा महर्षि जी को ईश्वर सम्बोधन करके लिखता था। पूरे दस महीने तक मैं उन्हें हर हफ़्ते पत्र लिखता रहा। किन्तु मेरे एक भी ख़त का जवाब नहीं आया। पूरे दस महीने के बाद दाता दयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी का मुझे पहला

ख़त मिला, जिसमें उन्होंने लिखा, 'फ़कीर! मुझे तुम्हारे सभी ख़त लगातार मिलते रहे हैं। मैं ईश्वर सम्बन्धी तुम्हारी सभी भावनाओं की इज्ज़त करता हूँ। मुझे खुद राधास्वामी मत के प्रमुख रायसाहिब सालिगराम जी महाराज की कृपा से परम सत्ता का ज्ञान तथा शान्ति मिली है। यदि तुम इस रास्ते पर चलने के लिए तैयार हो तो तुम फ़ौरन मेरे पास लाहौर आ जाओ।' इस समय तक ईश्वर को मनुष्य के रूप में देखने की मेरी लालसा चरम सीमा तक पहुँच चुकी थी।"

इस पत्र को पाकर फ़कीर जी बहुत ही खुश हुए। कुछ हफ़्ते पहले उन्होंने छुट्टी के लिए एक दरख़ास्त भेजी हुई थी। सौभाग्यवश, जिस दिन उन्हें दाता दयालजी का पहला पत्र मिला, उसी दिन उनकी छुट्टी की मंजूरी का पत्र भी आ गया। इतना ही नहीं कि केवल छुट्टी की मंजूरी आई, बल्कि सरकार द्वारा भेजा गया फ़कीर जी की जगह काम करने के लिए एक आदमी भी उसी दिन बागांवाला स्टेशन पर पहुँच गया। फ़कीर जी उसी दिन ही महर्षि जी के दर्शन के लिए लाहौर के लिए रवाना हो गये।

महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज एक सच्चे सन्त

और सच्चे गुरु थे। उनमें एक ख़ास रूहानी ताकत थी। वह उच्च कोटि के विद्वान लेखक, महात्मा और मानववादी थे। उन्होंने अपनी प्रतिभा, दर्शन और आध्यात्मिकता की वर्तमान भारत पर एक अमिट छाप छोड़ी है। उनका साहित्य पढ़ने योग्य है। उन्होंने अपने जीवन में जो हज़ारों लेख और किताबें लिखी हैं उनसे शिक्षा लेकर हर मनुष्य सच्चा मनुष्य बन सकता है और मानवता धर्म पनप सकता है।

फ़कीर बाबा जी ने महर्षि जी के बारे में लाहौर जाने से पहले कभी कुछ नहीं सुना था और न ही कभी उनकी कोई किताब पढ़ी थी। महर्षि जी से उनकी पहली मुलाकात बहुत महत्त्व रखती है। फ़कीर कहते हैं कि महर्षि जी ने बहुत ही प्यार से उनका स्वागत किया। महर्षि जी का आकार, रूप और रंग बिल्कुल वैसा था, जो उन्होंने स्वप्न में देखा था। युवक फ़कीर जी को उसी दिन राधास्वामी मत में दीक्षा दी गई।

सबसे पहले महर्षि जी ने फ़कीरचन्द जी को राधा-स्वामी मत के आदि गुरु स्वामी जी महाराज द्वारा लिखी गई 'सार बचन' नामक पुस्तक पढ़ने को दी। उस पुस्तक को पढ़ते-पढ़ते युवा फ़कीर काँप उठे और

उनकी आँखों में आँसू बहने लगे, क्योंकि उस पुस्तक में वेदान्त, बौद्ध धर्म, सूफ़ी मत, इस्लाम आदि सभी धर्मों की निन्दा की हुई थी और लिखा हुआ था कि ये सब के सब धर्म माया के चक्कर से बाहर नहीं निकले। युवक फ़कीर की आँखों से आँसू बहते देख-कर दयालु दाता दयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज बोले, "फ़कीर! इस पुस्तक को पढ़ना छोड़ दो अभी और जब तक मैं तुम्हें आगे का आदेश नहीं दूं तब तक फिर कभी इस पुस्तक को नहीं पढ़ना।" इसके बाद दाता दयाल जी ने फ़कीर जी को दो और पुस्तकें पढ़ने के लिए दीं। उन में से एक उनकी खुद की लिखी हुई रायसाहिब सालिगराम जी महाराज की जीवनी थी और दूसरी सन्त कबीर की कविताओं का संकलन कबीर साक्षी थी।

उसी समय से पण्डित फ़कीरचन्द जी ने सिमरण, ध्यान और भजन का अभ्यास दाता दयाल जी की आज्ञा के अनुसार शुरू कर दिया। वह हर रोज़ दाता दयाल जी के रूप पर ध्यान लगाते रहे। इससे उनको बहुत आनन्द और सन्तोष मिलता था।

फ़कीरचन्द जी को यह आदेश दिया गया कि

जहाँ कहीं भी उन्हें मौका मिले, वह राधास्वामी के सत्संग पर जाया करें। अभ्यास करने के साथ-साथ युवा फ़कीर जी अपनी नौकरी का फ़र्ज़ और परिवार के प्रति फ़र्ज़ को भी पूरी तरह निभाते रहे और जहाँ भी मौका मिलता राधास्वामी मत के सत्संगियों से मिलते। कुछ समय बाद उन्हें राधास्वामी मत के कुछ अनुयायियों के व्यवहार से एक बहुत बड़ा धक्का लगा। ये लोग बाबू कामताप्रसाद के अनुयायी थे। कामताप्रसाद जी गाज़ीपुर, उत्तर प्रदेश के राधास्वामी मत के सत्संग के मुखिया थे और अन्ध-विश्वास के कारण उनके अनुयायी केवल कामताप्रसाद जी को ही परम सत्ता राधास्वामी दयाल जी का अवतार मानते थे और बाकी सब गुरुओं और महात्माओं की निन्दा करते थे। जब युवा फ़कीर जी ने यह देखा कि राधास्वामी के अनुयायी भी कट्टर और तंगदिल हैं, तो उनका राधास्वामी मत से यकीन उठने लगा; किन्तु दाता दयाल में उनका विश्वास ज्यों का त्यों बना रहा। १९१६ में अपनी माली हालत को सुधारने के लिए वह बर्तानिया सरकार की नौकरी में पहले विश्वयुद्ध में बग़दाद चले गये सैनिक सेवा के लिए। बग़दाद जाने से पहले वह दाता दयाल जी के दर्शन

करने के लिए लाहौर गये। दाता दयाल जी ने उन्हें बड़े प्यार और दिल से आशीर्वाद दिया और सार बचन पुस्तक को उन्हें देते हुए कहा, "फ़क़ीर! अब तुम इस पुस्तक को पढ़ो और सिमरण, ध्यान और भजन को अधिक से अधिक समय दिया करो।"

बग़दाद में फ़क़ीर बाबा को साधना करने का बहुत समय मिला, इसलिए वह दाता दयाल के हुक्म के मुताबिक साधना में बहुत समय बिताने लगे, जिसके फलस्वरूप उन्होंने प्रकाश और शब्द के सभी आन्तरिक स्तरों का अनुभव कर लिया। इस अनुभव से वह बहुत ही आनन्द और मस्ती की हालत में रहने लगे। फिर भी वह पूरी तरह से सन्तुष्ट नहीं थे। उनके मन में प्रकाश से भी परे, उस परम तत्त्व पर पहुँचने की लालसा थी, जिसके आधार पर स्वामी जी महाराज ने सभी दूसरे धर्मों को एक प्रकार से अधूरा बताया था।

हर समय मस्ती में रहते हुए भी परम तत्त्व के अनुभव करने की प्रबल इच्छा ने उन्हें बेचैन कर दिया। 1918 के अन्तिम भाग में वह लम्बी छुट्टी लेकर भारत में आये और सीधे दाता दयाल जी के पास चले गये और लगभग अपनी सारी छुट्टियाँ

लाहौर में उनके पास गुज़ारीं। दिसम्बर महीने के आखिरी दिनों में उन्होंने अपने दिल की बेचैनी और दुःख के बारे में दाता दयाल जी को बताते हुए पूछा, "दाता! मुझे परम तत्त्व का अनुभव कब और कैसे होगा?" दाता दयाल जी ने उत्तर दिया, "तुम्हारे इस सवाल का जवाब कल दिया जायेगा।"

दूसरा दिन फ़कीर के जीवन का सबसे महत्त्व-पूर्ण दिन था, इसलिए इस घटना को उनके ही शब्दों में बताना ठीक रहेगा। फ़कीर बाबा कहते हैं :

"२५ दिसम्बर, १९१८ की बात है। दाता दयाल जी ने मुझे अपने कमरे में बुलाया। मैं तो सुबह से ही इस मौके की इन्तज़ार में था। मैं फ़ौरन उनके कमरे में गया। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज के चेहरे से एक खास तरह का प्यार और आदर का भाव टपक रहा था। उन्होंने अचानक मेरे हाथों में एक नारियल और पाँच पैसे रखकर, मेरे माथे पर टीका लगाया और मेरे पाँव को नमस्कार कर कहने लगे, "फ़कीर! तुम खुद अपने समय के पूर्ण गुरु हो। तुम सत्संगियों को नाम और सत्संग देना शुरू करदो। समय आने पर तुम्हारे अपने सत्संगी तुम्हारा 'सच्चा

गुरु' साबित होंगे। उनसे सन्त मत का गुप्त भेद तुम्हें साफ़ तौर से समझ में आ जायेगा।' इन शब्दों ने मेरे दिल पर गहरा प्रभाव डाला। मैंने उस समय खुशी और शोक का मिला-जुला अनुभव किया। दाता दयाल जी ने मेरे चेहरे के इस मिले-जुले भाव को भांप लिया और इसका कारण पूछा। मैंने नम्रता से उत्तर दिया, "दाता ! मैं सोच रहा हूँ कि जब मुझे खुद को ही सत्य का ज्ञान नहीं, तो दूसरों को नाम दान कैसे दे सकता हूँ। जब मैं अपनी अज्ञानता के बारे में सोचता हूँ, तो मैं उदास हो जाता हूँ, किन्तु जब मैं सोचता हूँ कि आप जैसे महान द्रष्टा ने मुझे सत्संग और नाम देने की पदवी दी है, तो मैं सोचता हूँ कि मैं कुछ बन गया हूँ और इसलिए मेरे चेहरे पर रौनक आ गई है।" इस पर दाता दयाल जी ने मुस्कराकर कहा, "फ़कीर ! तुम्हारे में भले ही निनानवें कमियाँ क्यों न हों, किन्तु तुम्हारे में हमेशा सत्य बोलने का जो एक गुण है, वह यकीनन तुम्हें मंज़िले मकसूद पर पहुँचा देगा। तुम न सिर्फ़ खुद ही मुक्ति पाओगे, बल्कि बहुत से दूसरे जीवों को भी मुक्ति पाने में मदद दोगे।' मैंने लगभग अपनी सभी छुट्टियाँ दयालु दाता दयाल जी के चरणों में बिताईं और

वापिस बग़दाद लौट आया।"

बग़दाद में फ़कीर बाबा लगातार भक्ति-भाव के भजन गाते रहते और हजूर दाता दयालजी को भगवान राम का पूरा अवतार मानकर सदा उनके प्रेम में मग्न रहते। उनकी इस परम भक्ति और मस्ती के कारण बग़दाद में रहने वाले सत्संगियों के लिए युवा फ़कीर जी आकर्षण का केन्द्र बन गये और वे सभी फ़कीर जी को महात्मा कहने लगे। बहुत से सत्संगियों ने उन्हें अपना गुरु मान लिया।

इसके बाद ईराक में युवा फ़कीर जी के साथ अजीबो-ग़रीब घटनाएँ घटीं। एक बार नहीं कई बार युवा फ़कीर जी युद्ध के मोर्चे पर जहाँ मौत उनके सामने मुँह खोलकर खड़ी होती, बड़ी-बड़ी भयानक स्थिति में उनकी रक्षा हो जाती थी और वह मरने से हमेशा बच गये। परम दयालु दाता दयाल जी महाराज का रूप प्रकट होकर सदा उनकी रक्षा करता। किन्तु जब फ़कीर जी के कुछ भक्तों ने उन्हें यह बताया कि युद्ध के मोर्चे पर जब मौत उनके सामने मुँह फाड़े खड़ी थी, उस समय फ़कीर जी के रूप में प्रकट होकर उन्हें मौत के मुँह से निकाला, तो फ़कीर जी हैरान रह गये। उनकी खुद की रक्षा तो परम सन्त दाता

दयाल जी महाराज ने ही की थी, इसलिए वह उन्हें भगवान से कम नहीं मानते थे। किन्तु जब फ़कीर जी को यह पता लगा कि उनमें यकीन रखने वाले लोग उनका ही रूप देखते हैं, तो पहले तो वह दंग रह गये, बाद में अचानक सारा रहस्य उनकी समझ में आ गया। उन्हें फ़ौरन ही परम सत् का ज्ञान हो गया। जब वह अपने गुरु के रूप को देखते थे, उस समय तो यह रहस्य उनकी समझ में नहीं आया था, किन्तु जब उनका अपना रूप उनके अनुयायियों के सामने प्रकट होने लगा और उन्हें इस बात का पूरा ज्ञान था कि वह कहीं भी किसी की सहायता करने के लिए शारीरिक रूप से वहाँ नहीं गये या नहीं जाते तो सारा भेद उनकी समझ में आ गया। अब उनकी समझ में आया कि क्यों दाता दयाल जी महाराज ने उनको कहा था, 'फ़कीर! तुम्हें सच्चा ज्ञान तुम्हारे शिष्यों के द्वारा ही मिलेगा।'

लगभग तीन महीने के बाद, जब युद्ध बन्द हुआ और जवान अपने बैरकों में चले गये, तो फ़कीर जी बग़दाद लौट आये। बग़दाद में राधास्वामी मत के बहुत सत्संगी रह रहे थे। जब उन्हें फ़कीर जी के वापिस आने की ख़बर मिली, तो वे उनके पास पहुँचे।

उन्होंने फ़कीर जी को एक ऊँचे आसन पर बिठाया, उन्हें फूल भेंट किये, और उनकी आरती उतारी। फ़कीर जी यह सब देखकर भौचक्के रह गये और उन्होंने उन लोगों से पूछा "आपके और मेरे परम गुरु तो दाता दयालजी महाराज हैं, मैं तो आपका गुरु नहीं। दाता दयालजी तो लाहौर में रहते हैं, उनकी ही आरती आपको उतारनी चाहिए। आप मेरी पूजा क्यों कर रहे हैं, मेरी आरती क्यों उतार रहे हैं ?" उन लोगों ने उत्तर दिया, "जब लड़ाई के मैदान में मौत हमारे सिर पर मँडरा रही थी और बचाव का कोई भी तरीका नज़र नहीं आ रहा था, उस खतरे के समय आप हमारे सामने आये और आपने हमें एक सुरक्षित जगह पर जाने का रास्ता बताया। हम उस जगह जाकर बच गये। आपने हमें मौत के मुँह से निकाला इसलिए हम आपके बहुत आभारी हैं।"

सत्संगियों की इन बातों से फ़कीर बाबा चकित रह गये। वह सोचने लगे कि वह खुद कई बार जब मौत के बिल्कुल पास थे, तो उनके दयालु दाता दयाल जी ने उन्हें मौत के मुँह से बचाया था। उन्होंने दाता दयाल जो को लड़ाई के मैदान में खड़ा हुआ अपनी आँखों से देखा था, वह झूठ नहीं था। अब इन

सत्संगियों ने उन्हें यानी कि फ़कीर जी को लड़ाई के मैदान में अपनी आँखों से देखा तो ये लोग भी झूठ नहीं बोल रहे। फ़कीर जी के मन में यह सवाल पैदा हुआ, 'तो उन सत्संगियों के सामने उनको बचाने के लिए लड़ाई के मैदान में कौन गया था, किसने उनको मौत के मुँह से निकाला था ? क्योंकि फ़कीर जी को यह ज्ञान था कि वह तो किसी की मदद करने गये नहीं, फिर मदद करने वाला था कौन ?' इससे फ़कीर जी को सत्य का ज्ञान हो गया और वह इस फ़ैसले पर पहुँचे कि जो व्यक्ति जिस रूप में ईश्वर को याद करता है, ईश्वर भक्त को उसी रूप में ही प्रकट होकर सहायता देता है। इस घटना के बाद उनकी गुरु की धारणा का विचार बिल्कुल बदल गया।

१९३८ में दाता दयाल जी के चोला छोड़ने से पहले फ़कीर बाबा ने दाता जी के आग्रह पर उन्हें यह तार भेजा :

"मैं फ़कीरचन्द, इस बात की प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं अपनी योग्यता और परिस्थितियों के मुताबिक संसार में सदा सत्य का प्रचार करूंगा।"

इसके बाद १९३९ में दाता दयाल जी महाराज

परम धाम को सिधार गए।

इसके बाद फ़कीर बाबा अपना ज़्यादा से ज़्यादा समय सिमरण, ध्यान तथा भजन में बिताने लगे। उन्होंने दो पुस्तकें लिखीं जो टीकाएँ थीं। उनकी एक टीका तो स्वामीजी महाराज द्वारा लिखित सार बचन पुस्तक के उस अध्याय पर थी, जिसका शीर्षक हिदायतनामा है, और दूसरी टीका उन्हीं की कृति बारामासा पर थी। इन दोनों किताबों के छपने के बाद फ़कीर बाबा ने दोनों किताबों की दो-दो प्रतियाँ व्यास वाले हज़ूर बाबा सावन सिंह जी महाराज, जिनको वह दाता दयाल जी का रूप मानते थे, के पास भेजीं। हज़ूर सावन सिंह जी महाराज ने इन दोनों किताबों को पढ़कर फ़कीर बाबा को लिखा, "फ़कीर! मैंने तुम्हारी दोनों किताबों को बड़े ध्यान से पढ़ा है। तुम एक सच्चे फ़कीर हो। तुम राधा-स्वामी मत की ऐसी श्रेष्ठ सेवा कर रहे हो, जिसके करने में दूसरे गुरु और हमारे धाम सफल नहीं हुए।

हिदायतनामा की टीका में फ़कीर बाबा ने उस भेद को काफ़ी सीमा तक खोला, किन्तु फिर भी इसका प्रचार खुले आम नहीं कर सके। जिस घटना के बाद, उन्होंने इस सत्य का खुला प्रचार करना

शुरू किया उसका उल्लेख उन्हीं के शब्दों में करना ठीक रहेगा। फ़कीर बाबा कहते हैं :

"फिर भी मैं इस बात का फ़ैसला नहीं कर सका कि मैं इस सच्चाई को बताने के सम्बन्ध में क्या करूँ। मेरे मन में यह डर था कि यदि मैं इस सत्य को साफ़-साफ़ शब्दों में कह दूँ, तो रूढ़िवादी, तंगदिल और खासकर बिना पढ़े-लिखे अन्धविश्वास में यकीन करने वाले सत्संगी इस बात को पसन्द नहीं करेंगे। मैं इसलिए १९४२ में छुट्टी लेकर सीधा हज़ूर बाबा सावन सिंह जी के पास व्यास चला गया। उनमें मेरी अगाध श्रद्धा थी और मैं उनकी इज़्ज़त दाता दयाल जी की तरह ही करता था। अत: मैं अपने मन के संशय को दूर कराने के लिए उनकी ही शरण में जाकर उनसे हाथ जोड़कर बोला, "हज़ूर ! आप मेरे मन के संशयों को दूर करें और मुझे सच्चे दिल से यह आशीर्वाद दें कि मैं दुनिया में उस सच्चाई को निडरता के साथ रख सकूँ, जिसका मैंने दाता दयाल जी से प्रण किया था। हुज़ूर जी महाराज ! आप मुझे मेरा फ़र्ज़ निभाने की ताकत दें।"

हज़ूर सावन सिंह जी महाराज ने बड़े प्यार से मेरे कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, 'फ़कीर ! मैं खुद

ही इस सत्य को लोगों के सामने रखना चाहता हूँ किन्तु रख नहीं पाया। इसके दो कारण हैं। पहला तो यह कि आम सत्संगी इस सत्य को जानने के अभी काबिल नहीं हैं। दूसरा कारण है मेरी संस्था के हालात। तुम एक सच्चे फ़कीर हो। तुम अपने गुरु के हुक्म को निडर होकर पूरा करो, मैं तुम्हें इसके लिए आशीर्वाद देता हूँ और मैं हर हालत में तुम्हारा साथ दूंगा।'

हजूर महाराज सावन सिंह जी का आशीर्वाद पाकर मैं अपने काम में जुट गया। उस समय से ही मैं अपने द्वारा किये गये अनुभवों को लिखने और सत्संग का काम निडरता से करता आ रहा हूँ।"

फ़कीर बाबा ने अपने इस फ़र्ज़ को निभाते हुए लाखों व्यक्तियों को शारीरिक, मानसिक और आत्मिक लाभ पहुँचाया। उनके सत्संग ज्यादातर हिन्दी भाषा में छपे हैं और अंग्रेज़ी भाषा में भी उनकी कुछ किताबें छपी हैं। उनके पूरे साहित्य में अन्धविश्वासों से बचने, सब धर्मों की एकता और सच्ची मानवता को अपनाने पर ज़ोर दिया गया है। उनकी यह दिली इच्छा थी कि मनुष्य जाति के लोग ईश्वर और धर्म के नाम की दुहाई देकर आपस

मैं लड़ना बन्द कर दें और मानव जाति के और टुकड़े नहीं करें। अपने इस मिशन को पूरा करने के लिए वह इस बुढ़ापे में भी भारत के कोने-कोने में और विदेशों में लम्बी-लम्बी यात्राएँ करते रहते ।

दाता दयाल जी ने फ़कीर बाबा को हुक्म दिया था कि वह सच्चे मानव धर्म को संसार के कोने-कोने में फैलाएँ और दुःखी जीवों की, चाहे वे किसी भी धर्म, जाति, देश या रंग के हों मदद करके उनको दुःखों से बचाएँ। फ़कीर बाबा ने अपने गुरु से प्रण किया था कि वह ऐसा ही करेंगे। उन्होंने अपना सारा जीवन इसी मिशन को पूरा करने में लगा दिया।

फ़कीर बाबा के अपने तथा अपने अनेकों सत्संगियों द्वारा अनुभव किये गये चमत्कारों या करिश्मों की व्याख्या करने से पहले मैं यह बताना चाहूंगा कि उनका संदेश भारत से बाहर कैसे पहुँचा और उन्होंने योरुप, कैनेडा और अमेरिका की लम्बी-लम्बी यात्राएँ कैसे शुरू कीं। मैं यह भी बताना चाहूंगा कि मेरे बचपन के संस्कारों और जन्म-जन्मान्तर के रिश्तों के कारण फ़कीर बाबा से मेरा सम्पर्क कैसे हुआ।

बचपन से ही मेरे संस्कार धार्मिक थे। एक ब्राह्मण कुल में पैदा होने के कारण ईश्वर भक्ति, पूजा, ध्यान तथा स्मरण मानो मुझे विरासत में ही मिला था। मुझे धर्म ग्रन्थों को संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, अंग्रेज़ी तथा फारसी भाषाओं में पढ़ने के बहुत से मौके मिले। मेरी जन्म भूमि मुल्तान (जो अब पाकिस्तान में है) है। मेरे पूज्य पिताजी चर्च मिशन हाईस्कूल में अंग्रेज़ी और गणित के विख्यात अध्यापक थे। उनको हिन्दी, उर्दू, संस्कृत और अंग्रेज़ी चारों भाषाओं का अच्छा ज्ञान था और वह एक मशहूर कवि भी थे। उनकी अंग्रेज़ी भाषा में छापी गई Lovely Poems नाम की एक किताब बहुत मशहूर हुई थी। उनकी कविताओं की तारीफ़ के ख़त उस समय के भारत के वाइसराय और जार्ज पंचम ने लिखे थे।

क्योंकि मेरे पिताजी मिशन हाईस्कूल में पढ़े थे बाद में उसी स्कूल में वह अध्यापक भी हो गये थे और ईसाई मत का उन पर काफ़ी असर पड़ा और उन्होंने बाईबल का गहरा अध्ययन किया। बाईबल का न्यूटैस्टामेण्ट उन्हें जबानी याद था। उनका दिमाग़ बहुत तेज़ था। बाईबल के साथ-साथ उन्होंने

भगवद्गीता का भी गहरा अध्ययन किया और गीता के कई अध्याय उन्हें जबानी याद थे। बचपन से ही वह सदा अपनी कक्षा में पहला नम्बर लेते थे। हाई-स्कूल पास करने के बाद ब्रिटिश सरकार ने उनको आगे पढ़ने के लिए विलायत भेजने के लिए चुना। मेरे पिता जी बड़ी खुशी से विलायत जाने की तैयारी कर रहे थे। जब उनकी पूरी तैयारी हो गई तो वह अपनी माता जो का आशीर्वाद लेना चाहते थे। उनके विलायत जाने की खबर पाकर उनकी माँ रोने लगी। मेरे पिताजी बहुत ही दयालु स्वभाव के थे और अपनी माँ की बहुत इज्ज़त करते थे। अपनी ममता-मयी माँ को रोता देख कर वह पिघल गये और उन्होंने विलायत जा कर आगे पढ़ने के विचार को छोड़ दिया और वहीं उसी स्कूल में एक अध्यापक लग गये।

मैं उनका इकलौता बेटा था हालाँकि बहनों की कमी नहीं थी। मुझ से छोटी पाँच बहनें हैं। मेरा नाम तो वैसे चन्द्रशेखर रखा गया था, किन्तु मेरे पिता जी मुझे बहुत बड़ा विद्वान देखना चाहते थे। उन दिनों ईश्वरचन्द्र विद्यासागर अपनी विद्वत्ता के लिए बहुत मशहूर थे, इसलिए मेरे पिता जी ने मेरा

नाम ईश्वरचन्द्र विद्यासागर रख दिया जो मैंने बाद में केवल ईश्वरचन्द्र ही रहने दिया। इकलौता बेटा होने के कारण पिता जी मुझे बहुत ही प्यार करते थे। वह जहाँ जाते अक्सर मुझे अपने साथ ले जाते। उनकी कृपा से एक बार पाँच वर्ष की आयु में मुझे महामना पण्डित मदन मोहन जी मालवीय के दर्शन हुए। पण्डित मालवीय एक धर्म सम्मेलन पर मुल्तान नगर में आये थे और वह वहाँ के नगर-सेठ राय-बहादुर हरिचन्द मेहरा के घर ठहरे हुए थे। राय-बहादुर हरिचन्द बहुत ही धार्मिक स्वभाव के थे। मेरे पिता जी रायबहादुर की पोती को अंग्रेज़ी उनके घर पढ़ाने जाते थे। क्योंकि रायबहादुर जी मेरे पिता जी की बहुत इज़्ज़त करते थे, इसलिए महामना मालवीय जी के आने पर उन्होंने मेरे पिता जी को अपने घर बुलाया। पिता जी अपनी आदत के मुताबिक मुझे अपन साथ ले गये। उन्होंने मुझे महामना से मिलाया। जब मैं महामना के बिल्कुल पास बैठा था; अचानक मेरे पिता जी किसी काम से उस कमरे से बाहर चले गये। जब मैं अकेला उनके पास रह गया, तो उन्होंने बड़े प्यार से मुझसे पूछा, "प्यारे बच्चे! क्या तुम्हें गायत्री मन्त्र आता है?"

मुझे याद नहीं कि गायत्री मन्त्र मैंने कहाँ से सीखा था, मैंने गायत्री मन्त्र गा कर सुना दिया। महामना जो बहुत खुश हुए और मुस्कराने लगे। उन्होंने बड़े प्यार से मेरे माथे का चुम्बन लिया और मेरे सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया और साथ ही साथ पाँच रुपये का एक चमचमाता हुआ बिल्कुल नया नोट मेरे हाथ में पकड़ा दिया। मैं समझता हूँ कि महामना द्वारा यह मेरी दीक्षा थी।

कालेज की शिक्षा के दौरान में और आगे चलकर पी-एच० डी० के अनुसन्धान के दौरान में मुझे भगवान की कृपा से इस्लाम, सिक्ख, जैन, बुद्ध तथा ईसाई धर्म के तुलनात्मक अध्ययन का मौका मिला। संस्कृत में एम० ए० तक की शिक्षा प्राप्त करने के कारण मैंने वेदों, उपनिषदों, ब्राह्मणों और भगवद्-गीता आदि का मौलिक अध्ययन किया। परम सन्त, परम दयाल फ़कीर बाबा के मिलने से पहले कुदरत मानो मुझे उनके दर्शन करने के काबिल बना रही थी, इसलिए ही तो मैं अनेक विद्वानों, धर्मगुरुओं तथा दार्शनिकों के सम्पर्क में आया।

सभी मुख्य धर्मों का गहरा अध्ययन करने की वज़ह से और धर्मगुरुओं से धर्म के बारे में बातचीत

करने से मेरे मन के अन्दर ज़रा भी शक बाकी नहीं रहा कि सभी धर्म एक ही ईश्वर को पाने के भिन्न-भिन्न साधन या रास्ते हैं और ईश्वर एक है, यह एक वैज्ञानिक और सनातन सत्य है।

सौभाग्यवश वैदिक दर्शन का गूढ़ अध्ययन करने का मौका मुझे जयपुर के महापंडित मोतीलाल जी शास्त्री की कृपा से मिला। क्योंकि पाँच साल की उमर से मैं साधना करता चला आ रहा हूँ, इसलिए मेरे विचार या ख्यालात केवल किताबो या बुद्धि के स्तर तक ही नहीं रहे बल्कि ईश्वर की कृपा से भक्ति-भाव से भी सिंचित रहे हैं।

बचपन से ही मुझे ईश्वर के साक्षात् दर्शन करने की इच्छा या लालसा रही है। इसलिए ही ईश्वर की कृपा से पढ़ते समय भी मेरा सम्पर्क धार्मिक अध्यापकों से ही हुआ।

जिस समय एमरसन गवर्नमेंट कालेज़ मुल्तान में मैंने दाखिला लिया; उस समय अच्छे घरों के लड़के जब अच्छे नम्बरों में पास होते थे तो वह इंजीनियर या डाक्टर बनने के लिए साइंस लेते थे, आर्ट्स नहीं। मैंने चौदह साल की आयु में मैट्रिक बहुत अच्छे नम्बरों में पास की थी और मुझे बहुत प्रलोभन दिये

गये कि मैं भी साइन्स लूं । मैं डाक्टर या इंजीनियर बनने के प्रलोभन में नहीं आया। मैंने दर्शनशास्त्र, संस्कृत, इतिहास तथा अंग्रेज़ी के विषय ही लिए। कुदरत की बात देखो कि पहले वर्ष ही मेरा वास्ता जिन-जिन प्रोफ़ेसरों से पड़ा वे सभी धार्मिक स्वभाव के थे जिनसे मैंने सच्चे धर्म के बारे में बहुत कुछ सीखा।

मेरा यह परम सौभाग्य था कि १९५५ में मेरा सम्पर्क हिन्दू संस्कृति के माने हुए विद्वान जयपुर के पण्डित मोतीलाल शास्त्री जी से हुआ, जिन्होंने वेदों, उपनिषदों और भगवद्गीता के वैज्ञानिक पहलुओं पर एक लाख पच्चीस हज़ार सफ़ों का साहित्य लिख डाला। उनकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर भारत के प्रथम राष्ट्रपति महामना डा० राजेन्द्रप्रसाद जी उनकी बहुत इज्ज़त करते थे। १९५५ में राष्ट्रपति जी ने पण्डित मोतीलाल जी को राष्ट्रपति भवन में हिन्दू संस्कृति पर पाँच भाषण देने के लिए पाँच दिन के लिए बुलाया था। इन भाषणों को सुनने के लिए उस समय के भारत के बड़े-बड़े विद्वानों, दार्शनिकों और लेखकों को भी बुलाया गया था। सभी विद्वानों ने उन भाषणों की बहुत ही तारीफ़ की और हिन्दू ग्रन्थों की महानता को

पहचाना । बाद में उन पाँचों भाषणों को राष्ट्रपति जी के आग्रह से एक पुस्तक के रूप में छापा गया । राष्ट्रपति जी ने स्वयं उस पुस्तक की भूमिका लिखी थी । यह पुस्तक सारे राष्ट्र के लिए एक अमूल्य निधि है ।

शास्त्री जी दिन में १८ घण्टे लिखते थे। दो घण्टे पूजा-पाठ करते थे और दो घण्टे अपने परिवार के साथ बिताते थे । वह केवल दो घण्टे ही सोते थे। उन्होंने इतनी मेहनत की कि उन्हें ५२ वर्ष की आयु में १९६० में यह शरीर छोड़ना पड़ा । उनके शरीर छोड़ने के बाद मुझे उनसे और भी अधिक प्रेरणा मिली। मैंने उनके विचारों पर आधारित 'Ethical Philosophies of India' नामक पुस्तक लिखी, जो १९६५ से इंग्लैण्ड के विश्वविख्यात प्रकाशक जार्ज एलन एण्ड अनविन, लन्दन द्वारा और अमेरिका के प्रकाशक जानसन पब्लिशिंग कम्पनी लिन्कन, नेबरास्का द्वारा साथ-साथ प्रकाशित हुई। पश्चिमीय विद्वानों ने इस पुस्तक को इतना पसन्द किया कि यह पुस्तक अमेरिका, इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया और कैनेडा के मुख्य कालेजों तथा यूनिवर्सिटियों में पढ़ाई जाने लगी और इसकी बहुत मांग बढ़ जाने के कारण इस

पुस्तक को पेपर बैक में विश्वविख्यात प्रकाशक हारपर एण्ड रो न्यूयार्क ने १९७० में प्रकाशित किया। इस पुस्तक के प्रकाशन के बाद मुझे अमेरिका में कई कालेजों तथा यूनिवर्सिटियों में भाषण देने के लिए बुलाया जाने लगा। यहाँ स्थायी रूप में आने से पहले मुझे १५ बार अमेरिका में बुलाया गया।

पण्डित मोतीलाल जी शास्त्री के विषय में यहाँ पर यह सब बताने का मतलब यह है कि मैं केवल यह बताना चाहता हूँ कि मेरा फ़कीर बाबा से मिलना और उनके सम्पर्क में आना अचानक घटना के कारण नहीं हुआ। कुदरत मानो शास्त्री जी से ज्ञान प्राप्त करा कर मुझे फ़कीर बाबा से मिलने के लिए और उनका परम शिष्य बनने के लिए तैयार कर रही थी। पाँच साल के अरसे में शास्त्री जी ने अपने अनन्त ज्ञान के कारण वेदों, उपनिषदों और दूसरे हिन्दू ग्रन्थों में गूढ़ तत्त्व की जो बातें मुझे बताईं, वे सभी बातें मेरे परम गुरु परम दयाल जी महाराज ने बिना हिन्दू ग्रन्थों को पढ़े अपने आन्तरिक अनुभव के आधार पर बताईं। उनमें कुछ भी तो अन्तर नहीं है। इससे यह सिद्ध होता है कि सच्चाई एक है।

यद्यपि सभी धर्मों की एकता में मेरा बचपन से ही यकीन था, फिर भी ऊपर बताए गए सभी महापुरुषों के सम्पर्क में आना मेरे लिए एक वरदान सिद्ध हुआ। इन महापुरुषों की कृपा से मैं पूरा मानववादी बन गया। शास्त्री जी के मानव आश्रम, जयपुर में रहकर मैंने बहुत कुछ सीखा। अब ऐसे लगता है कि मानव आश्रम, जयपुर में मेरा रहना मुझे मानवता मन्दिर होशियारपुर के लिए रास्ता दिखा रहा था। भगवान की कृपा से मुझे जीवन के सभी सुख प्राप्त थे, अच्छी पढ़ी-लिखी पत्नी, अच्छे दो बच्चे, सुखी परिवार, नाम, यश तथ

सम्मान सभी था। एक सफल अध्यापक, लेखक तथा दार्शनिक होते हुए भी हर समय मानो कुछ कमी महसूस होती थी। मैं बुद्धि के स्तर से भी ऊपर उठकर परम तत्त्व ईश्वर का साक्षात् दर्शन करना चाहता था। मेरी साधना का समय बढ़ता गया और बचपन से भगवान के साक्षात् दर्शन करने की तमन्ना कम नहीं हुई।

१९५९ के अन्त में एक रात को मैंने एक स्वप्न देखा, जिसमें एक बहुत ही सुन्दर, दयालु और जीवन्मुक्त से दिखने वाले सफेद दाढ़ी वाले महापुरुष के मुझे दर्शन हुए। उनकी मुस्कराहट से चारों ओर रोशनी फैल रही थी। उन्होंने मेरे सिर पर बहुत ही प्यार से हाथ फेरते हुए कहा, "नवयुवक, तुम उदास क्यों हो? क्या तुम ईश्वर के दर्शन करना चाहते हो? अच्छी बात है, तुम्हें इसी जन्म में ही ईश्वर के दर्शन होंगे और तुम्हें मुक्ति भी मिलेगी।" वह महापुरुष मेरे साथ-साथ देश-विदेश में यात्रा करते और लोगों से मेरा परिचय कराते। देश-विदेश के लोग उनके भाषणों को बहुत ही पसन्द करते और उन्हें भगवान की तरह मानते थे।

समय बीतने पर मैं इस स्वप्न को एक प्रकार से भूल ही गया था। १९६२ में मुझे पहली बार अमेरिका में पढ़ाने के लिए बुलाया गया और पहली ही बार मेरी विदेश-यात्रा बहुत ही सफल रही। एक साल के बाद १९६३ में जब मैं अमेरिका से वापिस लौटा तो देहली में अपनी बहन वेद शर्मा के घर एक दिन के लिए रुका। मेरे बहनोई श्री रमेशचन्द्र शर्मा ने उसी दिन मुझसे कहा, "चन्द्र! एक बहुत बड़े सन्त परम दयाल पण्डित फ़कीरचन्द जी महाराज देहली में आये हुए हैं। मैं उनके सत्संग में जा रहा हूँ,

क्या तुम और भाग्य उस सत्संग में चलोगे ?" हम दोनों ने न तो कभी पण्डित फ़कीरचन्द जी महाराज का नाम ही सुना था और न ही उनके विषय में कभी कुछ पढ़ा था इसलिए उनमें हमारी कोई खास रुचि नहीं थी। दूसरी बात यह थी कि हम दोनों कुछ घण्टे पहले ही अमेरिका की लम्बी यात्रा से वापिस लौटे थे और थकावट-सी थी। मेरी इच्छा हुई कि रमेश जी को मना कर दूं। लेकिन न जाने कौन-सी ताकत हम दोनों को इस महापुरुष के दर्शन करने के लिए खींच रही थी, मैं न नहीं कर सका और मैं और भाग्य दोनों रमेश जी के साथ हो लिए।

हम तीनों उस हाल में तब पहुँचे, जब फकीर बाबा वहाँ भाषण दे रहे थे और लगभग दो हजार आदमी उनके सत्संग से लाभ उठा रहे थे। ज्योंही मेरी नज़र स्टेज पर बैठे हुए महापुरुष पर पड़ी तो मैं भौचक्का-सा रह गया। मैंने भाग्य से कहा, "देखो भाग्य। यह तो वह महापुरुष हैं जो मुझे स्वप्न में १९५९ में दिखे थे और मैंने उस स्वप्न के बारे में दूसरे दिन तुम्हें बताया भी था।" मैं उस दिव्य महा-पुरुष को देखता रहा, देखता रहा, इतने में रमेश जी ने मुझे आगे बढ़ने को कहा ताकि हम ठीक जगह बैठ सकें। जब हम तीनों आगे बढ़े और एक जगह बैठने ही वाले थे कि इतने में उस महापुरुष ने हमारी ओर देखा और इशारा करते हुए हमें स्टेज की ओर बुलाया। जब हम स्टेज के पास पहुँचे तो उन्होंने मुझे स्टेज के ऊपर आने को कहा। जब मैंने स्टेज पर पहुँचकर उनके पाँवों को छुआ तो मेरे सारे शरीर में मानो एक बिजली-सी दौड़ गई। मैं रोमांचित हो उठा। उस महापुरुष ने अपने गले में डले हुए सभी फूलों के गजरों को उतार कर मेरे गले में डालकर बड़े ही प्यार से मेरे सिर

पर हाथ फेरते हुए कहा, "तो तुम हो शर्मा दी ग्रेट ! तुम यहीं मेरे पास बैठे रहो।"

मैं उनके मुँह से अपना नाम सुनकर पहले से भी ज्यादा हैरान रह गया, सोचने लगा कि वह मेरा नाम कैसे जानते हैं। फिर मैंने सोचा कि शायद रमेशचन्द्र शर्मा के साथ मुझे देखकर यह समझ लिया होगा कि मैं भी शर्मा हूं। फिर उन्होंने यह क्यों कहा कि 'तो तुम हो शर्मा दी ग्रेट।' मैं तो आज से पहले कभी उन्हें मिला नहीं, वह मुझे कैसे जानते हैं। यह रहस्य मेरी समझ में नहीं आ रहा था। फिर अचानक मुझे इस बात का ध्यान आ गया कि सत्पुरुष तो त्रिकालदर्शी होते हैं और मुझे उस महापुरुष में श्रद्धा हो गई, मुझे उनके सत्पुरुष होने में ज़रा भी शक नहीं रहा। मुझे उसी समय अचानक परमहंस रामकृष्ण और उनके परम शिष्य उस समय के नवयुवक नरेन्द्र (जो बाद में विवेकानन्द के नाम से मशहूर हुए) की पहली मुलाकात की घटना याद आ गई। नौजवान नरेन्द्र पहले नास्तिक थे। उन्होंने परमहंस रामकृष्ण की बहुत तारीफ़ सुन रखी थी और उनको देखने की उनकी इच्छा थी। अतः एक दिन नौजवान नरेन्द्र अपने एक मित्र के साथ अपनी जिज्ञासा के कारण परमहंस को देखने के लिए उनके स्थान पर गये। परमहंस ने जब नरेन्द्र को देखा तो फ़ौरन बोले, "तो तुम आ ही गये नरेन्द्र ! मैं तुम्हारे इन्तज़ार में ही था।" नौजवान नरेन्द्र परमहंस के मुँह से अपना नाम सुनकर हैरान रह गये और सोचने लगे कि परमहंस उनका नाम कैसे जानते हैं और वह उनका इन्तज़ार कर रहे थे। इस घटना को याद करते ही मुझे अपने बिल्कुल पास बैठे हुए महापुरुष के सत्पुरुष और अन्तर्यामी होने में

जरा-सा भी शक नहीं रहा और मैं मन ही मन उन्हें बार-बार नमस्कार करने लगा।

उसके बाद फ़कीर बाबा के आशीर्वाद से मुझे हर साल अमेरिका में पढ़ाने और भाषण देने के लिए बुलाया जाने लगा। १९६७ में मुझे जब एक साल के लिए अमेरिका बुलाया गया तो मैं फ़कीर बाबा को मिलने गया। उन्होंने मुझसे कहा, "आई० सी० शर्मा ! तम अमेरिका में पढ़ाने के लिए एक साल के लिए नहीं जा रहे हो। तुम्हें वहाँ तीन साल रहकर पढ़ाना पड़ेगा।" सन्तों की वाणी कभी झूठी नहीं होती, सचमुच ही मुझे अमेरिका में तीन साल के लिए पढ़ाना पड़ा। १९६८ में फ़कीर बाबा ने मुझे वर्जीनिया में जहाँ मैं पढ़ा रहा था, एक बहुत ही प्यारा और प्रेरणा देने वाला पत्र लिखा। जिसमें उन्होंने लिखा, "आई० सी० प्यारे ! तुम्हारा अमेरिका में आने का मक़सद सिर्फ़ कालेज और यूनिवर्सिटियों में पढ़ाने तक ही नहीं खत्म हो जाता। पश्चिम के लोग सुना है बहुत ही अच्छे और जिज्ञासु हैं। कुदरत ने तुम्हें उन लोगों के साथ लगा दिया है। सत्य एक है, परम सत्ता एक है और हम सब उसी परम सत्ता से आये हैं, मानव जाति एक है। तुम जब तक वहाँ हो, तुम्हारा फ़र्ज़ है कि तुम वहाँ के लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान दो, उनके मानसिक दुःखों को दूर करो। सच्चाई को संसार भर के लोगों में फैलाने के लिए ही क़ुदरत ने तुम्हें विदेशों में जाने का मौक़ा दिया है और तुम्हें मेरे साथ भी लगा दिया है। इस सच्चाई को फैलाना बहुत ज़रूरी है और इसके फैलाव के लिए केवल मैं और तुम नहीं, बल्कि दुनिया के बहुत से दूसरे लोग भी मालिक की मर्ज़ी से खसोटे जा रहे हैं। दुनिया को शान्त के लिए दो जबर-

दस्त ताकतों अमेरिका और रूस के वातावरण को बदलना बहुत ही ज़रूरी है। यदि ऐसा नहीं किया गया तो दुनिया की बर्बादी को रोका नहीं जा सकता। सौभाग्यवश अमेरिका के निवासी भगवान में आस्था रखने वाले और जिज्ञासु हैं उनको सच्चाई समझने में कोई मुश्किल नहीं होगी। तुम उनकी भलाई के लिए, उनके तलाक कम करने के लिए और उनको सच्चा ज्ञान देने के लिए अपना अधिक से-अधिक समय लगाओ। ऐसा करने के लिए वहाँ के लोगों को अपने धर्म, मत या यकीन को बदलने की ज़रूरत नहीं। उन्हें तो मानवता के धर्म के बारे में बताना है, जो कि सबका धर्म है। तुम्हें यह सब काम करने के लिए न तो नौकरी छोड़ने की ज़रूरत है और न ही संन्यास लेने की। तुम्हारी एक सुन्दर पढ़ी-लिखी पत्नी है, दो प्यारे-प्यारे बच्चे हैं। उनके प्रति जो तुम्हारी ज़िम्मेदारी है उसको निभाना तुम्हारा पहला धर्म है। तुम एक अच्छे पति बनो, अच्छे पिता बनो, गृहस्थी के सुखों को भोगो, लेकिन अपने परम लक्ष्य को कभी मत भूलो और अपना अधिक-से-अधिक समय साधना तथा लोक-कल्याण में लगाओ। तुम्हारी पत्नी भाग्य पढ़ी-लिखी और समझदार है। उसकी भगवान में भी आस्था है। उम्मीद है वह तुम्हारे मिशन में तुम्हें मदद देगी। उसको कहना कि उसका कल्याण तभी होगा जब वह भी साधना के इस रास्ते को अपनाए। मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहेगा। मालिक तुम्हें सुखी रखें। अबकी बार जब तुम वापिस आओगे तो मैं तुम्हारी पूरी तरह से जाँच करूंगा। तुमने दुनिया में महान काम करने हैं।"

फ़कीर बाबा के इस प्यार भरे प्रेरणा देने वाले पत्र को मैंने कई बार पढ़ा और हर बार मुझे आनन्द मिला। इस

पत्र के मिलने से कुछ ही दिन बाद अमेरिका की एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था 'ऐसोसियेशन फार रिसर्च एण्ड इनलाईटनमैण्ट (जिसका संक्षिप्त नाम ए० आर० ई० है) के मुखिया श्री ह्यूलिन केसी ने मुझे वर्जीनिया बीच में बुलाया, जहाँ उनकी संस्था का हैडक्वार्टर है। इस संस्था के संचालक श्री ह्यूलिन केसी के स्वर्गीय पिता एडगर केसी थे, जिनकी मृत्यु १९४५ में हो गई थी। एडगर केसी पश्चिमीय जगत् के एक सिद्ध पुरुष माने जाते हैं। उन्होंने अपनी जिन्दगी में हज़ारों तथाकथित चमत्कार दिखाये और सैकड़ों भविष्यवाणियाँ कीं, जो आज सत्य सिद्ध हो रही हैं। उनकी एक भविष्यवाणी यह भी थी कि भारत बीसवीं सदी के मध्य में आज़ाद हो जायेगा।

जब एडगर केसी बालक ही थे, उन्हें जब सीधा सुला दिया जाता, तो वह समाधि की हालत में चले जाते और उन्हें भूत और भविष्य का ज्ञान हो जाता। उनकी शिक्षा केवल सातवीं कक्षा तक ही हुई थी। बिना किसी डाक्टरी शिक्षा या ज्ञान के उन्होंने सैकड़ों ऐसे-ऐसे मरीज़ों की भयानक बीमारियों का इलाज किया, जिनका कि बड़े-बड़े एम० डी० डाक्टर नहीं कर सके थे। आश्चर्य की बात तो यह है कि जब कोई व्यक्ति किसी मरीज़ के बारे में एडगर केसी को बताता, तो समाधि की हालत में एडगर केसी की आँखों के सामने मरीज़ का पूरा शरीर और शरीर का एक-एक अंग आ जाता। हालांकि मरीज़ स्वयं केसी जी से सैकड़ों मील की दूरी पर होता था। केसी जी मरीज़ के एक-एक अंग को बड़ी ग़ौर से देखते और उन्हें मालूम हो जाता कि बीमारी मरीज़ के शरीर के कोनसे हिस्से में है। बीमारी को पहचान लेने के बाद केसी जी उस बीमारी के

लिए दवाइयाँ भी बताते थे। एक सातवीं कक्षा तक पढ़े, मेडिकल ज्ञान से बिल्कुल अनभिज्ञ एडगर केसी का बड़े-बड़े रोगों को पहचाना और उनका सफल इलाज करना एक बड़ी हैरानी में डाल देने वाली घटना थी, जिसने बड़े-बड़े डाक्टरों को भी चकित कर दिया था। उनकी ऐसी चमत्कारी घटनाओं के समाचार न्यूयार्क जैसे विख्यात राष्ट्रीय पत्रों में १९१० में छपने लगे और बड़े-बड़े मेडिकल जरनलों में भी उनकी चर्चा होने लगी। एडगर केसी का नाम पूरे अमेरिका में मशहूर हो गया और बड़े-बड़े डाक्टर असाध्य रोगों के विषय में एडगर केसी की सलाह लेने के लिए आने लगे। लोगों की भलाई के लिए दयालु एडगर केसी ने वर्जीनिया बीच नामक एक बहुत सुन्दर नगर में समुद्र के किनारे एक संस्था कायम की, जिसमें उन्होंने एक हस्पताल बनाया। इसी संस्था का नाम बाद में चल कर ए० आर० ई० हो गया। इस संस्था का काम ईश्वर सम्बन्धी सत्य, पुनर्जन्म और कर्म सिद्धान्त पर खोज करना और लोगों को योगाभ्यास आदि सिखाना है। एडगर केसी ने लोगों को 'हरि ओम्' नाम पर ध्यान लगाने की सलाह दी।

इस संस्था के इतिहास में सन् १९२३ के आसपास एक ऐसी घटना घटी, जिसकी वजह से पश्चिमीय जगत् में एक नई चेतना की लहर ज़ोरों से चल पड़ी। यह लहर थी पुनर्जन्म और कर्म सिद्धान्त में विश्वास और साथ ही साथ ध्यान, समाधि आदि में रुचि, जिसका प्रचार अब तो दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। ए० आर० ई० के सदस्य लगभग सारे संसार में फैले हुए हैं। योरुप के देशों, आस्ट्रेलिया, जापान, चीन तथा कैनेडा आदि से लोग हर साल इस संस्था के सम्मेलनों में आते रहते हैं। खास कर गर्मी के दिनों में यहाँ

बहुत रौनक होती है और संस्था के सम्मेलन बहुत ही रुचिकर होते हैं। यहाँ आने वाले लोग अधिकतर ऊँची शिक्षा वाले डाक्टर, इंजीनियर, मनोवैज्ञानिक, प्रोफ़ेसर और बड़ी-बड़ी कम्पनियों के मालिक हैं।

इस संस्था के बहुत मशहूर होने का सबसे बड़ा कारण है पश्चिमीय जगत् में पुनर्जन्म और कर्म सिद्धान्त का प्रचार एडगर केसी के कारण करोड़ों पश्चिमीय अब पुनर्जन्म में विश्वास रखते हैं। एडगर केसी को समाधि की हालत में अचानक एक दिन पुनर्जन्म के रहस्य का पता कैसे चला इस घटना को यहाँ बताना उचित होगा।

१९२३ में ओहायो प्रान्त के डेटन नगर में एक प्रिंटिंग प्रेस के मालिक श्री आर्थर लैमर्स ने एडगर केसी को बुलाया। लैमर्स एडगर केसी की समाधि की हालत में उससे अपनी लम्बी बीमारी का कारण जानना चाहता था। एडगर केसी समाधि की हालत में बोले, "आर्थर! तुम्हारी इस लम्बे अरसे की बीमारी का कोई शारीरिक कारण नहीं है। यह तो तुम्हारे पिछले जन्म के कर्मों का फल है। तुम्हारी यह पत्नी, पिछले जन्म में भी तुम्हारी पत्नी थी जो तुमसे नफ़रत करती थी। तुम अपने अचेतन मन में अपनी पत्नी से इसलिए नफ़रत करते हो और इसी नफ़रत के कारण तुम सदा अशान्त रहते हो और मन की इस अशान्ति के कारण तुम सदा बीमार रहते हो। तुम अपनी पत्नी से नफ़रत करना छोड़ दो, उसे प्यार करो, तुम्हारे बुरे कर्म कट जायेंगे और तुम्हारी बीमारी दूर हो जायेगी।"

समाधि की हालत में एडगर केसी जो भी बोलते थे उसको ग्लैडिस डेविस नाम की एक सेक्रेटरी वैसा ही लिख लिया करती थी। जब एडगर केसी उस दिन अपनी समाधि

से उठे, तो हमेशा की तरह उन्होंने अपनी समाधि की हालत में बोली गई बातों को पढ़ा। पुनर्जन्म और कर्म जैसे शब्दों को पढ़कर वह सन्नाटे में आ गये। वह एक कट्टर ईसाई थे और हर रोज़ बाईबल का पाठ किया करते थे और बाईबल इतवार के स्कूल में पढ़ाते भी थे। उन्होंने ईसाई धर्म के अलावा किसी धर्म के बारे में कभी कुछ पढ़ा भी नहीं था, पुनर्जन्म और कर्म शब्द उनके दिल पर एक हथौड़े की तरह चोट पहुँचाने लगे। वह बार-बार अपने को कोसने लगे कि समाधि की हालत में उन्होंने बाईबल के खिलाफ़ पुनर्जन्म और कर्म शब्दों का प्रयोग क्यों किया। उन्होंने भगवान से प्रार्थना की कि वह उनकी ऐसी शक्ति को वापिस ले लें। वह ऐसी कोई भी दलील नहीं सुनना चाहते थे जो ईसाई धर्म से मेल नहीं खाती हो। उन्हें पूरा दिन चैन नहीं आया और रात को नींद नहीं आई। वह रातभर बेचैनी की हालत में डेटन की गलियों में घूमते रहे। कई दिन तक इस बेचैनी की हालत में रहे। किन्तु फिर उन्हें अचानक ध्यान आया कि पुरानो और नई बाईबल में कहीं भी तो यह नहीं लिखा है कि पुनर्जन्म नहीं होता। कर्म सिद्धान्त के विषय में उन्हें एकदम बाईबल के इस कथन की याद आई, "As you sow, so shall you reap." यानी कि तुम जैसा करोगे वैसा भरोगे। उन्होंने सोचा, यह कर्म सिद्धान्त नहीं तो और क्या है? इससे उनके मन को काफ़ी शान्ति मिली। उन्होंने बाईबल को फिर कई बार बड़े ग़ौर से पढ़ा और कई जगह पर ईसा मसीह द्वारा पुनर्जन्म के समर्थन की बातों को पाया। मिसाल के तौर पर ईसा मसीह के समय एक साधु, जिसका नाम जाहन दी बैपटिस्ट था, सब लोगों को ईश्वर की ओर लगाने की दीक्षा दे रहा था। दीक्षा देते समय

वह लोगों को कहता था कि भगवान के एकमात्र पुत्र ने जन्म लिया है। बहुत से लोगों का यह विचार था कि यह जाहन दी बैपटिस्ट पिछले जन्म में इलायजा नाम का एक पैग़म्बर था। ईसा मसीह के शिष्यों ने एक बार उनसे पूछा भी था, "लोग कहते हैं कि इलायजा ही जाहन दी बैपटिस्ट बनकर वापिस आया है, क्या यह सत्य है?" ईसा मसीह ने इसका उत्तर हाँ में दिया। यह पुनर्जन्म नहीं तो फिर और क्या है। ऐसी एक नहीं, बल्कि अनेक घटनाएँ बाईबल में भरी पड़ी हैं, जिनको देखकर एडगर केसी को पक्का यक़ीन हो गया कि पुनर्जन्म और कर्म सिद्धान्त बाईबल या ईसाई धर्म के खिलाफ़ नहीं है, आगे चलकर तो एडगर केसी ने अपनी समाधि की हालत में यहाँ तक भी कह दिया कि ईसा मसीह अपनी किशोरावस्था में भारत भी गये थे, जहाँ उन्होंने योग आदि साधना सीखी थी। केसी ने अपनी समाधि की हालत में बहुत से लोगों की पिछले जन्मों की बातें बताते हुए उनके जन्म-स्थान तथा मरने की तारीख़ आदि भी बता दी थी, जिनकी जाँच करने पर वे सत्य सिद्ध हुईं। उन्होंने अपनी ज़िन्दगी में हज़ारों मरीज़ों की बीमारियाँ पहचानीं और उनका इलाज भी बताया। उनकी समाधि की हालत में बोले गये एक-एक शब्द को उनकी सेक्रेटरी द्वारा लिख दिया जाता था। ये हज़ारों पृष्ठ प्रकाशित किये गये, जो फ़ाइलों तथा किताबों के रूप में आज भी इस संस्था के अन्दर फ़ायर-प्रूफ़ कमरे में सुरक्षित हैं। इन पर लगातार खोज की जा रही है। बड़े-बड़े डाक्टर, मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक, दार्शनिक, मन के रोग का इलाज करने वाले डाक्टर तथा विद्वान इनसे फ़ायदा उठा रहे हैं। एडगर केसी पर दर्जनों बैस्ट सेयरज़ छप चुकी हैं, जिनकी लाखों प्रतियाँ हर साल

दुनिया में बिकती हैं।

इस संस्था के संचालक श्री ह्यलिन केसी को शायद मेरी पुस्तक 'Ethical Philosophies of India' को पढ़ने का मौक़ा मिला, इसलिए मुझ में उनकी रुचि हो गई। उन्होंने मुझसे लिन्चबर्ग कालेज लिन्चबर्ग वर्जीनिया में जहाँ मैं उस समय दर्शन-शास्त्र पढ़ा रहा था, टेलीफ़ोन से बातचीत की और मुझे अपनी संस्था ए० आर० ई० में भाषण देने के लिए बुलाया। ह्यलिन केसी एडगर केसी के विद्वान सुपुत्र थे, जो एक सच्चे मानववादी और बहुत ही मिलनसार महापुरुष थे। उन्होंने तथा और सभी भाषण सुनने वालों ने पुनर्जन्म और कर्म सिद्धान्त पर दिये गये मेरे भाषण को बहुत ही पसन्द किया और बाद में मुझे बार-बार उस संस्था में भाषण देने के लिए बुलाया जाने लगा। मैं अपने भाषणों में हमेशा फ़कीर बाबा के विषय में भी बोलता था।

१९६९ के शुरू में ह्यलिन केसी अमेरिका के चालीस चुने हुए डाक्टरों, प्रोफेसरों, मनोवैज्ञानिकों, उद्योगपतियों और धर्म तथा पुनर्जन्म में रुचि रखने वाले लोगों के एक ग्रुप को लेकर विश्व-यात्रा के लिए जाने वाले थे। इस यात्रा में जाने से कुछ दिन पहले उन्होंने मुझसे टेलीफ़ोन पर पूछा, "डा० शर्मा! क्या हम भारत में जाकर किसी तरह फ़कीर बाबा से मिल सकते हैं?" क्योंकि पिताजी अब मुझे प्रेरणा देने वाले अति प्यारे पत्र अक्सर लिखा करते थे, मुझे ऐसे लगा कि ये सब आश्चर्यजनक घटनाएँ उनकी ही कृपा से घट रही हैं और उनकी भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हो रही है।

मैंने फ़कीर बाबा को एक पत्र लिखा कि ह्यलिन केसी

और उनके दल के लोग भारत आ रहे हैं और वे आपसे मिलना चाहते हैं। क्या वे उन्हें देहली में किसी तरह दर्शन दे सकते हैं। फ़कीर बाबा ने उत्तर दिया कि वे देहली में उनसे मिल सकते हैं। सौभाग्यदश, जिन दिनों ए० आर० ई० का दल देहली पहुँचा, फ़कीर बाबा भारत में वसन्त का दौरा करके देहली में पहुँचे थे। प्रोग्राम बहुत सुन्दर बन गया। मेहन होटल देहली में ह्यलिन केसी तथा उनके दल के सभी लोगों ने फ़कीर बाबा के दर्शन किये और उनके सत्संग का लाभ उठाया। बाद में उनका यह सत्संग 'A Word to Americans' नामक छोटी-सी पुस्तक में छप गया।

जब ए० आर० ई० का यह ग्रुप विश्वयात्रा से वापिस अमेरिका पहुंचा तो ह्यूलिन केसी ने फ़कीर बाबा की बहुत ही तारीफ़ की और यह बताया कि दल के सभी लोग बाबा की सच्चाई, सरलता, पवित्रता और ऊँचे विचारों से बहुत ही प्रभावित हुए। ह्यलिन केसी और मेरे बहुत से और अमेरिकन मित्रों ने फ़कीर बाबा को अमेरिका बुलाने के लिए मुझसे बातचीत की। जब इस बारे में बातचीत चल रही थी कि मेरी तीन साल की छुट्टी समाप्त हो गई और मुझे भारत वापिस जाना पडा। यह बात जुलाई १९७० की है।

एक साल के बाद १९७१ में मुझे एक साल के लिए फिर अमेरिका में पढ़ाने के लिए जाना पड़ा। भारत में एक साल के अरसे में मैं कई बार होशियारपुर और देहली पिताजी के दर्शनों के लिए गया और उनके सत्संगों का जी भर लाभ उठाया। मेरी उनसे घण्टों तक प्राइवेट बातें भी होतीं। जब मैं अमेरिका जाने से पहले उनसे मिलने गया तो उन्होंने मुझे बड़े प्यार से आशीर्वाद देते हुए कहा।

"ईश्वरचन्द्र ! तुम्हारी इस बार की अमेरिका की यात्रा का खास मक़सद है ।"

जून १९७१ में मैं भाग्य के साथ फिर अमेरिका पहुँचा। हमें बार-बार अमेरिका जाना पड़ता था, इसलिए हमने दोनों बेटों को अमेरिका में पढ़ने के लिए छोड़ दिया था। बड़ा लड़का अरुण उस समय कैमिस्ट्री, बी० एस० सी० के दूसरे साल में था और छोटे लड़के प्रियदर्शी ने हाल ही में वहाँ हाई-स्कूल पास किया था और कालेज जाने वाला था । बच्चे हमारे अमेरिका में जाने से बहुत प्रसन्न होते थे और चाहते थे कि हम स्थायी रूप से अमेरिका में आ जायें किन्तु मैं अपनी उदयपुर यूनिवर्सिटी और भारत को छोड़ना नहीं चाहता था ।

इस बार वर्जीनिया के जिस शहर में मैं पढ़ा रहा था वह ए० आर० ई० संस्था वर्जीनिया बीच से केवल ४५ मील दूरी पर ही था। इसलिए इस संस्था में मुझे बार-बार भाषण देने के लिए बुलाया जाने लगा । इस संस्था के अनेकों सदस्य डाक्टर, मनोवैज्ञानिक और प्रोफ़ेसर मेरे सम्पर्क में आये जो अब मेरे स्थायी रूप से परम मित्र बन चुके हैं । और मुझे अपने इन अमेरिकन मित्रों पर गर्व है । जब मैं इनके नि;स्वार्थ प्रेम और अपने प्रति इनकी श्रद्धा देखता हूँ, तो ऐसे लगता है कि वे हमारे सम्बन्धियों से भी अधिक प्रिय हैं ।

ए० आर० ई० के इलावा वर्जीनिया बीच नगर में कई और भी बहुत-सी संस्थाएँ हैं, जिनका मक़ सद है आध्यात्मिक या रूहानियत तरक्क़ी कराना। इनमें से एक संस्था है योगा सेण्टर। मेरी मुलाकात योगा सेण्टर को चलाने वाले एक बहुत ही सुन्दर नवयुवक जोज़फ़ फैण्टन से हुई। जोज़फ़ की

हिन्दू धर्म, हिन्दू संस्कृति और योग इत्यादि में बहुत रुचि है और वह एक अच्छे साधक भी हैं। उन्होंने मुझे कई बार अपनी संस्था में भाषण देने के लिए बुलाया। मैं सदा अपने भाषणों में फ़कीर बाबा और उनके महान कार्यों के बारे में बताया करता। जोज़फ़ फैण्टन ह्यूलिन केसी की तरह मुझे बार-बार कहने लगे कि मैं किसी तरह से फ़कीर बाबा को अमेरिका में बुलाऊँ।

अन्त में ए० आर० ई० और योगा सेण्टर ने मिलकर मेरे द्वारा फ़कीर बाबा को अमेरिका में आने का निमन्त्रण भेजा, जिसके फलस्वरूप फ़कीर बाबा पहली बार स्वर्गीय पण्डित मामचन्द जी के साथ अमेरिका में सत्संग देने के दौरे पर आये। उनका सत्संग देने का यह दौरा बहुत ही कामयाब रहा। ए० आर० ई० योगा सेण्टर वर्जीनिया बीच, रोनोक वर्जीनिया लिन्चबर्ग, वर्जीनिया और फिलीडलफ़िया वाशिंगटन डी० सी०, न्यूयार्क और भिन्न-भिन्न चर्चों में और केन्द्रों में भिन्न नगरों में उनके कई लोगों पर प्रभाव डालने वाले सत्संग हुए और हज़ारों मनुष्यों ने उन सत्संगों से फ़ायदा उठाया।

पहली बार की यात्रा में बाबा फ़कीर जी के सत्संगों में आने वाले सभी अमेरिकन ही थे। फ़कीर बाबा को यह अनुभव हुआ कि अमेरिका के अधिकतर लोग भले, जिज्ञासु ईश्वरनिष्ठ, सफ़ाई-पसन्द और अनुशासन में यक़ीन रखने वाले हैं। जिस चीज़ ने फ़कीर बाबा को सबसे पहले प्रभावित किया वह है इस देश में रहने वाले लोगों की सफ़ाई-पसन्दी और हर चीज़ का बहुत अच्छी तरह से आयोजन करना।

पिताजी ने अपनी पहली ही यात्रा में अमेरिकन

सत्संगियों पर अपनी अमिट छाप छोड़ी। जगह की कमी के कारण उनके भक्तों का नाम यहाँ नहीं दिया जा रहा, जिसके लिए मैं माफ़ी चाहता हूँ।

१९७६, १९७८ और १९८० में फ़कीर बाबा के डाक्टर परसराम अग्रवाल के साथ तीन दौरे और हुए। इस बार सत्संग में आने वालों की संख्या बढ़ती ही चली गई और अब अमेरिकन लोगों के साथ-साथ भारतीय सत्संगियों ने भी उनके सत्संग का लाभ उठाया। १९८० के दौरे में पिताजी कैनेडा, अमेरिका के अलावा इंग्लैंड और जर्मनी में भी सत्संग देने के लिए गये। उनके १९८० के दौरे ने मुझे बहुत ही फ़ायदा पहुँचाया, क्योंकि वह इस बार लगातार दो हफ्ते तक मेरे घर पर रहे। हम दोनों यानी मैं और मेरी पत्नी भाग्य को उनको बहुत निकट से देखने का मौका मिला। हमारे लिए उनका हमारे पास रहना बहुत ही महत्त्व रखता है। मेरी पत्नी भाग्य की उनके प्रति श्रद्धा सौ गुणा बढ़ गई ओर उसमें विवेक की जागृति हुई और उसने मेरे साथ-साथ पिताजी के मिशन को जिन्दगी भर चलाने की क़सम खाई। मुझे पिताजी के साथ रहकर न केवल अलौकिक आनन्द ही मिला, बल्कि बहुत से गूढ़ तत्त्वों का भी उनकी कृपा से ज्ञान हुआ।

इसी १९८० के दौरे में मेरी पिताजी से कई गूढ़ विषयों पर लम्बी-लम्बी बातें हुईं। उनकी अपार कृपा से मेरे मन के सभी संशय दूर हो गये। उन्होंने मुझे अमेरिका में कुछ साल और रहकर तत्त्व सम्बन्धी कुछ ऐसी पुस्तकों को अंग्रेजी भाषा में लिखने को कहा, जिससे पश्चिम में रहने वाले लोगों को फ़ायदा पहुँचे। मैंने भी यह अनुभव किया कि अब मुझे केवल यनिवर्सिटियों में पढ़ाने-लिखाने और

बौद्धिक पुस्तकें लिखने का काम न करके पिता जी के मिशन को चलाना चाहिए और ऐसी किताबें और लेख लिखने चाहिए, जिनमें फ़कीर बाबा की व्याख्याओं के आधार पर ईश्वर, धर्म, मनुष्य का सच्चा रूप और उसके जीवन के उद्देश्य के बारे में सीधी-सादी, लोगों की समझ में आने वाली भाषा में व्याख्या हो। मैंने निश्चय किया कि सबसे पहले दो पुस्तकें लिखी जाएँ, जिनमें पहली पुस्तक 'सिद्ध सत्पुरुष फ़कीर बाबा' और दूसरी 'सब धर्मों से परे धर्म' हो। फ़कीर बाबा ने मेरे इस विचार को बहुत ही पसन्द किया और इसमें सफल होने का आशीर्वाद भी दिया।

परम दयालु फ़कीर बाबा का सन्देश केवल भारत के कल्याण के लिए ही नहीं, बल्कि मानवमात्र के कल्याण के लिए है। वह अपने पूरे जीवन में विश्वशान्ति अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सभी धर्मों के मेल-जोल के लिए पूरा-पूरा प्रयास करते रहे। वह सारे संसार में शान्ति फैलाने वाले पथ-पदर्शक, निराशा में आशा, अँधेरे में प्रकाश और विषमता में समता लाने वाले युग पुरुष थे। उन्हें उनके परम गुरु दाता दयाल जी महाराज ने संसार भर में सच्चाई फैलाने और शिक्षा को बदल जाने का आदेश दिया था, जिससे कि मानवता और टुकड़े-टुकड़े होने से बच जाय। धर्म के नाम पर वैसे ही मानवता लाखों टुकड़ों में बँट गई है, उसे और टुकड़े होने से बचाना बहुत ज़रूरी है। दाता दयाल जी खुद भी इस मिशन को पूरा करने के लिए, मानववाद के प्रचार के लिए १९११ में अपनी विश्वयात्रा के दौरान में अमेरिका गये थे। उनको पूरा विश्वास था कि उनके परम शिष्य फ़कीर इस सच्चाई को दुनिया के कल्याण के लिए फैलायेंगे।

यदि हम फ़कीर बाबा के जीवन भर के अनुभवों से शिक्षा प्राप्त करके उसे अच्छी तरह से समझ जाएँ, तो हमें कुछ और जानने और समझने की ज़रूरत नहीं है। फ़कीर बाबा के मुताबिक हर मनुष्य अपने आप में पूर्ण है, क्योंकि

उसका आदि आधार परम तत्त्व पूर्ण है। लेकिन अज्ञानवश वह अपनी पूर्णता के बारे में जानता नहीं। इस पूर्णता का ज्ञान प्राप्त करने के लिए मनुष्य के रास्ते में तीन बाधाएँ आती हैं। पहली बाधा है शरीर की निर्बलता, दूसरी बाधा है मन की चंचलता और तीसरी बाधा है अपने असली रूप को न पहचानना। अब प्रश्न उठता है कि क्या इन तीनों बाधाओं को दूर किया जा सकता है और मनुष्य सच्चा मनुष्य कैसे बन सकता है? इस प्रश्न का उत्तर ही मानवता धर्म की विशेषता है और इसी मानवता धर्म को समझने के लिए फ़कीर बाबा के विचारों को अच्छी तरह से समझ कर जीवन में उतारना चाहिए।

फ़कीर बाबा के अनुसार मानवता धर्म, सन्त मत और सनातन धर्म में कोई अन्तर नहीं है। ये तीनों मार्ग और दूसरे सभी धर्म नीचे दिए गए पाँच प्रश्नों से सम्बन्धित हैं:—

(१) मानवता का स्वरूप क्या है?
(२) विश्व का स्वरूप क्या है?
(३) मनुष्य और सृष्टि का आधार क्या है?
(४) इस मूल आधार, परम तत्त्व या परम धाम पर पहुँचने का रास्ता क्या है?
(५) इस मार्ग को अपनाने से मिलता क्या है?

फ़कीर बाबा ने इस बात को अच्छी तरह से समझा दिया है कि मनुष्य की आत्मा का आदि स्रोत प्रकाश और शब्द से भी परे है। इसमें ज़रा भी शक नहीं कि सुरत या मनुष्य का आदि स्वरूप प्रकाश और शब्द से ओत-प्रोत है। इसलिए प्रकाश और शब्द ही दो ऐसे तत्त्व हैं जिनका अनुभव करने से मनुष्य को अपने असली रूप की पहचान होती है। मनुष्य की पूर्णता का भेद इसी सत्य में ही छुपा हुआ है। प्रकाश और शब्द सृष्टि के भी मूल तत्त्व हैं। इसलिए विश्व का स्वरूप मनुष्य के स्वरूप से मेल खाता है। सारा ब्रह्माण्ड उस अनादि, अनन्त परम तत्त्व से निकला

है, जिसे अनामी कहा गया है। मनुष्य का मूल आधार भी वही अनामी तत्त्व है, जिससे सारा विश्व निकला है और वही परम तत्त्व ही मनुष्य का असली रूप है।

फ़कीर बाबा कहते हैं, "सन्तों के धर्म का उद्देश्य है दुःखी मानवता को बचाना। मानवता का धर्म ही सच्चा धर्म है। यह मनुष्य की आत्मा को शरीर और मन के स्तरों से परे ले जाता है, ताकि मनुष्य नीचे के स्तरों पर वापिस न लौट आए। मानवता धर्म ही सच्ची रूहानियत है। इससे ऊँचा धर्म और कोई नहीं।

फ़कीर बाबा के सभी लेख, भाषण, पुस्तकें तथा सत्संग इस बात पर ज़ोर देते हैं कि सभी धर्मों और मतों का मकसद या लक्ष्य एक ही है। जिस चीज़ को भिन्न-भिन्न धर्मों ने भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा है ईश्वर, अल्लाह, ब्रह्म, मालिक, परम तत्त्व या राधास्वामी कुछ भी कह दो, वह है ज़रूर। फ़कीर बाबा ने अपने अनुभव के आधार पर इस परम तत्त्व, परम धाम तक पहुँच कर ही इसकी व्याख्या की है। सभी धर्मों व मतों के आपसी झगड़े तभी समाप्त हो सकते हैं, जब हरएक धर्म का अनुयायी अपने जीवन में सच्ची मानवता के असूलों को अपनाए। मानव धर्म के असूल किसी जाति या व्यक्ति विशेष के लिए नहीं, विश्वभर के लोगों के लिए हैं।

मानव धर्म को इसलिए कोई अलग एक पन्थ नहीं मानना चाहिए। इसे हम सभी धर्मों की व्याख्या कह सकते हैं। क्योंकि मानव धर्म की व्याख्या सत्य और मनुष्य पर ही आधारित है, वह किसी भी धर्म का विरोध नहीं करती। किसी भी धर्म या मत को मानने वाला अपने ही इष्ट, या गुरु पर यकीन रखते हुए फ़कीर बाबा द्वारा दिये गये ज्ञान से फ़ायदा उठा सकता है और धीरे-धीरे परम तत्त्व को पा सकता है।

फ़कीर बाबा ने न केवल भारत में बल्कि विदेशों में भी सभी धर्मों के अनुयायियों को मानवता धर्म के सच्चे मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी है। उन्होंने साफ़-साफ़ कहा है कि

कोई भी व्यक्ति, चाहे वह बड़ा हो या छोटा, अमीर हो या ग़रीब, स्त्री हो या पुरुष, यहूदी हो या ईसाई, मुसलमान हो या हिन्दू, बौद्ध हो या जैन, सिक्ख हो या पारसी, मानव होने के नाते ईश्वर के अनुभव को बिना किसी भेद-भाव के प्राप्त कर सकता है। उन्होंने अपने अन्तिम समय तक अपनी परम दया को बिना किसी भेद-भाव के मानव जाति की भलाई के लिए प्रयोग किया। अपनी अन्तिम यात्रा के लिए जब पिता जी भारत छोड़ रहे थे तो उनके ज्योतिषी ने उनसे यह प्रार्थना की कि वह लोगों के दुःखों का भार अब अपने ऊपर लेना बन्द कर दें और किसी को रोगों से मुक्त होने का आशीर्वाद न दें, ताकि दूसरे लोगों के बुरे कर्मों का असर उनके स्वास्थ्य पर न पड़े। किन्तु फ़कीर बाबा ने ऐसा करने से साफ इनकार कर दिया और कहा कि जब तक वह ज़िन्दा हैं, वह दाता दयाल जी के हुकम का पालन करते हुए दुःखी जीवों पर दया करते रहेंगे।

फ़कीर बाबा का जन्म विश्व के कल्याण के लिए ही हुआ। उन्होंने अपना सारा जीवन इसी मिशन को पूरा करने के लिए ही लगा दिया। उन्होंने न केवल मानवता धर्म की व्याख्या की, बल्कि उसे अपने जीवन में उतार कर यह सिद्ध कर दिया कि मानवता धर्म के असूलों पर चल कर संसार में सफल जीवन बिता कर अन्त में परमधाम को पहुँचा जा सकता है।

शोक समाचार

परम सन्त परम दयाल जी महाराज के प्रिय सखा मास्टर मोहनलाल जी, हाउस न० ३५३ गली न० ७ कमालपुर फगवाड़ा रोड होशियारपुर निवासी बुधवार 5-10-83 को प्रातः काल निज धाम पधार गये। मानवता मन्दिर के सत्संगियों की ओर से प्रार्थना है कि मालिक, मास्टर मोहन लाल जी की आत्मा को शान्ति दे और उन के परिवार वालों को धैर्य की शक्ति प्रदान करे ताकि वह मास्टर मोहन लाल जी की जुदाई को सहन कर सकें।

सैक्रेटरी,
मानवता मन्दिर होशियारपुर

विशेष सूचना न० १

सभी केन्द्रों के सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि यदि वह परम सन्त हज़ूर मानव दयाल जी महाराज के बसन्त के टूर प्रोग्राम में अपने यहाँ सत्संग कराना चाहते हों तो १५ दिसम्बर तक अपनी प्रार्थना सैक्रेटरी मानवता मन्दिर होशियारपुर को भेज देवें। वरना देरी हो जाने पर आपकी प्रार्थना को वसन्त के दौरे में शामिल नहीं किया जायेगा ।

सूचना न० २

मानव कल्याण सभा चण्डीगढ़ का सालाना सत्संग हज़ूर परम सन्त परम दयाल पं० फ़कीर चन्द जी महाराज के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में १९, २०-११-८३ को सनातन धर्म सभा सैक्टर १७।C में, हज़ूर परम सन्त मानव दयाल जी महाराज की अध्यक्षता में सम्पन्न होगा। इसमें भारत के विशिष्ट अनुभवी सन्तों को आमन्त्रित किया गया है ।

समय :—१९-११-८३ को सायं २ बजकर ३० मिनट से ५ बजे तक। २०-११-८३ को प्रातः ९ बजे से दोपहर १२ बजे तक ।

नोट :—सभा यथा सम्भव बाहर से आने वाले सत्संगियों के लिए १९ सायं और २० प्रातः खाने और रहने का प्रबन्ध करेगी। बाहर से आने वाले सज्जन बिस्तर साथ लायें ।

हर सत्संग के प्रारम्भ में हज़ूर परम सन्त परम दयाल जी महाराज के टेप रिकार्ड किये हुए सत्संगों से शुरू किया जाया करेंगे ।

प्रधान
मानव कल्याण सभा

शोक समाचार

बड़े दुःख के साथ सूचित किया जाता है कि श्रीमती चिन्तकौर, धर्म पत्नी चौधरी पूर्ण चन्द ग्राम व डा० खा० सिहपुर जिला होशियारपुर २८-९-८३ को परम धाम सिधार गई हैं। मानवता के सत्संगियों की ओर से प्रार्थना है कि परमात्मा उनकी आत्मा को शान्ति दे और उनके परिवार वालों को इस असहनीय दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करे !

सेक्रेटरी
मानवता मन्दिर होशियारपुर

Regd. No. 2626574 NOVEMBER 10th 1983
MANAV MANDIR NWHSP—7

ADDRESS

To

363 Sh. A. Hanmanth [redacted]
H. No. 10-3-19 [redacted]
Humayun Nagar [redacted]
Hyderabad 500028 [redacted]

From :

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.

Phone : 2022

Shiv Dev Rao Press Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.)